आचार्यश्री आनन्दऋषि ग्रंथमाला पुष्प ५ वां

सामायिकसूत्र-सार्थ

लेखक



मुनिराजश्री आनन्दऋषिजी (बाळजी)

श्रीमन्नागपुरीयबृहत्तपागच्छाधिराजः—

श्री पार्श्वचंद्रसूरीश्वरसद्गुरुभ्यो नमः।

आ. श्री भ्रातृचंद्रसूरिसद्गुरवे नमो नमः।

श्री सविधि

सामायिकसूत्र सार्थ

उपदेशक—

प. त. मु. श्रीजगतचंद्रजी गणि महाराज.

प्रेरक—मुनिश्री विद्याचंद्रजी।

प्रकाशक और द्रव्यसहायक—

श्रीमान् बाबु नथमलजी रामपुरीया

प्रथमावृत्ति नकल १०००

वीरसंवत् २४६६ वि. सं. १९९६

धी वीरविजय प्रि. प्रेस, अमदाबाद.

[illegible]संपतूबाईकी यत् किंचित् जीवनरेखा

बीकानेर निवासी ज्ञानपिपासु गुणानुरागी शासनरसिक मूर्तिपूजक श्रीमान् बाबु नथमलजी रामपुरीयाने वहां संपतबाई का जन्म विक्रम संवत १९७७ का पोष सुदी त्रीज के रोज हुवा था. धर्मनिष्ठ माता ओर पिताकी अमीद्रष्टिसे निरीक्षण कराती पुत्रकी तरह वात्सल्यभावसे वृद्धि पाती हुई ज्ञान मेलने योग्य उमर को प्राप्त हुइ तब जैनधर्म जीसके रगेरगमें व्याप्त हो रहा है. ऐसे श्रीमान् नथमलजी भाईए अपनी फरज समजकर अपनी पुत्री संपतबाई के हृदयमें व्यवहारिक ज्ञान के साथ धार्मिक ज्ञान भी योग्यतर जमाया.

संपतबाई तरुणी अवस्था को प्राप्त हुई जान संवेगीपक्षमें धर्मनिष्ठ कुलमें संपतबाईका लग्न कीया. संपतबाई बुद्धिशाली, विनयी, विवेकी और सुसंस्कारी होनेसें पितृपक्षमें और श्वसुर पक्षमें (उभयकुलमें) अपना जीवन यशस्वी बनाया. यह आत्मा बडी भाग्यशाळी थी. परंतु छोटीसी उमर में संपतबाई का स्वर्गवास विक्रम संवत १९९६ के अषाड सुद ७ के रोज समाधिपूर्वक हो गया. लेकीन उसका गुण तो यहां ही रह गया. संपत्तबाई का आत्मा को शांति प्राप्त हो.

अखंड सौभाग्यवती अपनी पुत्री संपतबाई के गुणसें आकर्ष हो कर ओर परमपूज्य परम गीतार्थ आचार्यदेव श्रीभ्रातृचंद्रसूरीश्वरजी महाराज साहेब का शिष्य आबालब्रह्म-

चारी, चारित्रचूडामणि, परम तपस्वी मुनिराज श्री जगतचंद्रजी गणिवर महाराज साहेबजी के उपदेशसें संपतबाई के स्मरणार्थ सविधि सामायिक सूत्र सार्थ (देववंदन गुरुवंदन पूजा-विधि और छुटक बोलका समावेश कीया गया है.) छपानेके लीये संपूर्ण द्रव्य सहाय देकर छोटे छोटे बालको पर बडा उपकार किया है. ऐसे उदार दीलके सुश्रावक बाबु नथमलजी रामपुरिया को धन्यवाद (देना उचित है.) हम देते है. यह लघु पुस्तक आद्यांत पढनेसें बालको को अपना कर्त्तव्यका अच्छी तरहसें ख्याल हो जायगा.

यह पुस्तकमें दाखल किया हुवा विषयो के संग्राहिका साध्वीजी खांतिश्रीजीका भी हम आभार मानते है.

ली. संतचरणोपासक मुनि विद्याचंद्र

शुद्धिपत्रक

पानुं	लीटी	अशुद्ध	शुद्ध
१	३	नमा	नमो
४	४	इादयोंके	इद्रियोके
४	८	मुक्ता	मुक्तो
५	८	समणा	समणो
८	६	जावा विरहिया	जीवा विराहिया
११	५	मेरको	मेरेको
१६	१०	जाव	जाव
१७	१	अरिताणं	अरिहंताणं
१८	४	लोगम्स	लोगस्स
२१	४	प्रमु	प्रभु
२१	७	कुथुं	कुंथुं
२१	११	कुथुं	कुंथुं
२६	२	संदसह	संदिसह
२७	१२	दुगच्छा	दुगंच्छा

पानुं	लीटी	अशुद्ध	शुद्ध
२८	१	सातगारव	सातागारव
२८	३	परिहृ	परिहरुं
३२ अ	५	भगवान्	भगवन्
३२ अ	११	हच्छा	इच्छा
३४	९	मये	मए
३७	८	हरितके	हस्तिके
३८	७	दयाण	दयाणं
३८	७	नायग्गणं	नायगाणं
३८	१०	चारंत	चाउरंत
४०	११	भबिस्संति	भविस्संति
४१	१०	सबका	सबको
४४	११	ममं	मम
४६	३	गम	मम
५०	१०	ओहं	ओमि
५२	३	परिहाणं	परिहीणं

पानुं	लीटी	अशुद्ध	शुद्ध
५२	५	वायरो	बायरो
५५	५	०	अंह
५६	५	घर	घर
६१	१	परोपकार	परोपकारी
६२	९	घर	ओघर
६३	१	प्रतिष्ठित	सुप्रतिष्ठित
६३	३	रुग्रीव	सुग्रीव
६३	५	विष्णु	विष्णुसेन
६४	१	रुर	सूर
६४	२	रुदर्शन	सुदर्शन
६४	८	रुमित्र	सुमित्र

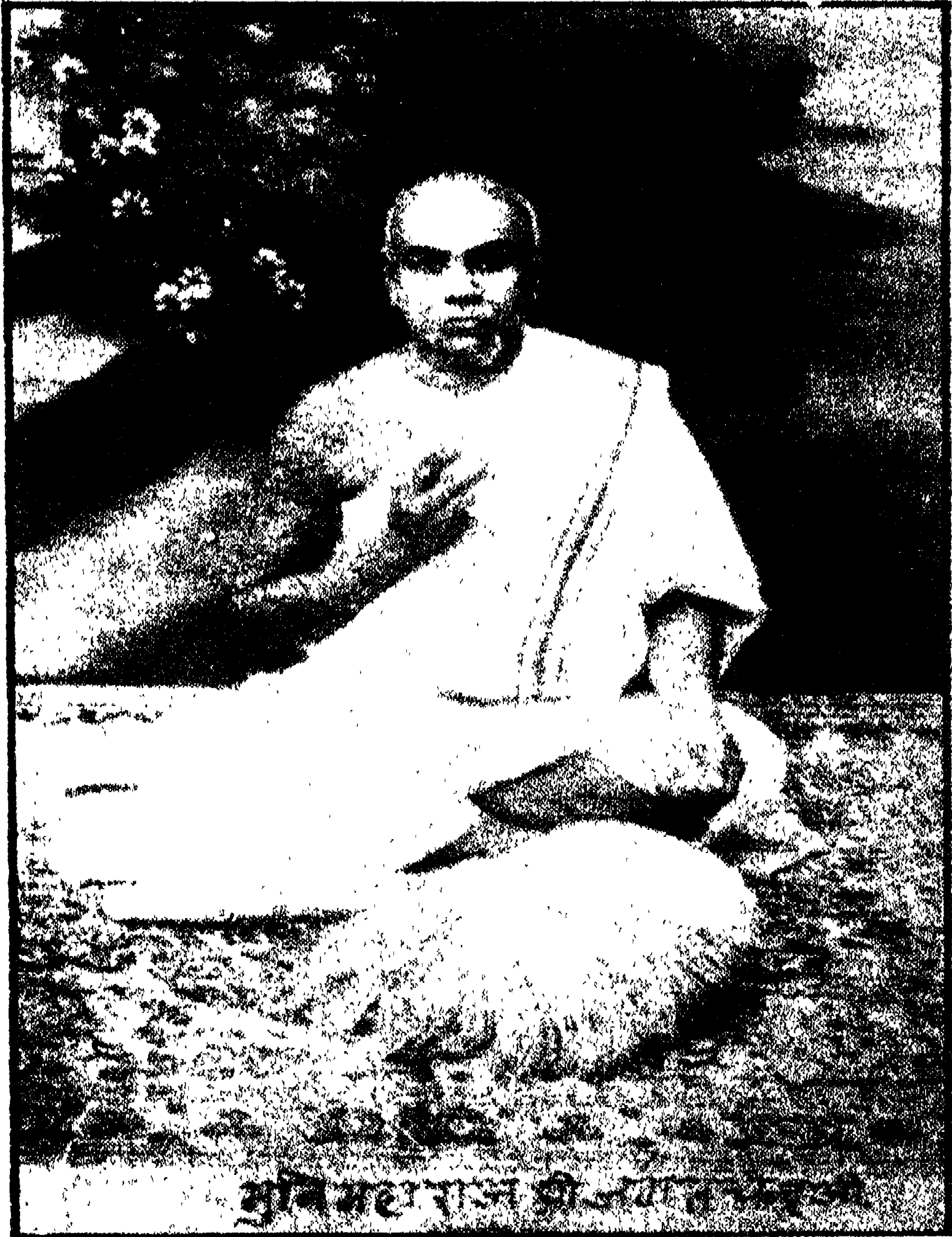
एहि बुकमें दृष्टिदोष–प्रेसदोषादिसें रही हुई भूलो सुधारकर पढना।

स्मरण तिथियां

युगप्रधानश्रीपार्श्वचंद्रसूरीश्वरजीदादासाहेब जन्म सं. १५३७ चैत्र सुद ९। दीक्षा सं. १५४६ वैशाख सुद ३। सूरिपद सं. १५६५ जोधपुर। युगप्रधानपद सं. १५९९। स्वर्गवास सं. १६१२ मागशर सुद ३ रविवार जोधपुर। **भारतभूषणश्रीभ्रातृचंद्रसूरीश्वरजी साहेब** जन्म सं. १९२० मारवाडी। दीक्षा सं. १९३५ फा० सु. २। सूरिपद सं. १९६७ वैशाख सुदी १३। स्वर्गवास सं. १९७२ वैशाख वद ८। **पूज्यश्रीसागरचंद्रसूरीश्वरजीसाहेब** जन्म सं. १९४३। दीक्षा सं. १९५८ माघ सु १३। सूरिपद सं. १९९४ जेठ सुद ४। स्वर्गवास सं. १९९६ आशो वद ४। **पूज्यमुनिराजश्रीपुनमचंद्रजीगणिवर** जन्म सं. १९२४ पौष मासमें। दीक्षा सं. १९५४ मागशर सुद १०। स्वर्गवास स. १९८१ आसो वद २। **अमदावाद**।

स्व. शांतमूर्ति विद्वद्वर्य आचार्य श्री भानुचंद्रसूरीश्वरजीना शिष्य

तपस्वी मुनिराज श्री जगत्चंद्रजी महाराज



जन्म सं. १९३५ देशलपुर, दीक्षा सं. १९[illegible] कच्छ-अंजार

युगप्रधान श्रीपार्श्वचन्द्रसूरि-दादाका छंद

सूरिपार्श्वचन्द्र हुवा अवतारी। जस नाम-तणी महिमा भारी॥ कष्ट टले मिटे तापतपो। पूज्य दादाजीरो जापजपो॥१॥ पूज्य नामे सब कष्टटले॥ वलि भूत प्रेत तो नाहि छले। मिले न चोर होय गप्पचपो॥ पू०॥२॥ लक्ष्मी दिनदिन वधजावे। और दुख नेडो तो नहि आवे॥ व्योपारमें होवे बहुत नफो॥ पू०॥३॥ अडच्यो काम तो होइ जावे। वलि विगडच्यो काम तो वनजावे॥ भूल चूक नहि खाय डफो॥ पू०॥४॥ राजकाजमें तेज रहे। वलि खमा खमा सबलोक कहे॥ आछिजायगा जाय रूपो॥ पू०॥५॥ पूज्य नामतणो जिण लियो ओटो। तस कदे नहि

आवे तोटो ॥ घर घर बारणे कांइ तपो ॥ पू०॥ ॥ ६ एक माला नित्य नेम रखो । किण वात तणो नहि होय धको ॥ खालि विमास ओर टले जीसपो ॥ पू० ॥ ७ ॥ स्व गच्छतणी प्रतिपालकरे । मुनिराम सदा तुम ध्यानधरे । कोइ प्रत्यक्ष वात मति उथपो ॥पू०॥८॥ इति ॥

(शिखरिणि-वृत्तम्)

सदाशा पूरोजी मन वचन काया शुचि करी ।
तुमारी सेवाकुं अहनिश करुं ध्यान धरके ॥
महा ज्ञानी ध्यानी परम पद दानी गुरु तुमे ।
सुपार्श्वाख्यं चंद्रो दिनकरयुतो मोद कुरुते ॥१॥

अनुक्रमणिका

२२२१५



॥ श्री वीराय नमः ॥

॥ अथ नवकार (नमस्कार) सूत्र ॥

नमो अरिहंताणं ॥१॥ नमो सिद्धाणं ॥२॥ नमो आयरियाणं ॥३॥ नमो उवज्झायाणं ॥४॥ नमो लोए सव्वसाहूणं ॥५॥ एसो पंच नमुक्कारो ॥६॥ सव्व पावप्पणासणो ॥७॥ मंगलाणं च सव्वेसिं ॥८॥ पढमं हवइ मंगलम् ॥९॥

नमो अरिहंताणं—अरिहंत भगवंतोंको [मेरा नमस्कार हो]

नमो सिद्धाणं-सिद्धभगवंतोंको [मेरा] नमस्कार हो।

नमो आयरियाणं—आचार्य महाराजोंको [मेरा] नमस्कार हो।

नमो उवज्झायाणं—उपाध्यायजी महाराजोंको [मेरा] नमस्कार हो।

नमो लोए सव्वसाहूणं—लोकमें यानि ढाई द्वीप प्रमाण मनुष्य लोकमें रहे हुए सब साधु महाराजोंको [मेरा] नमस्कार हो।

एसो पंच नमुक्कारो—यह पांच नमस्कार.

सव्व पावप्पणासणो--सब पापोंका नाश करने वाला है।

मंगलाणं च सव्वेसिं--और सब मंगलोमें

पढमं हवइ मंगलम्--प्रथम मंगल [कल्याण रूप] प्रधान मंगल है।

॥ अथ पंचिंदिय (गुरुस्थापना) सूत्र ॥

पंचिंदिअसंवरणो,
तह नवविहबंभचेरगुत्तिधरो ॥
चउव्विहकसायमुक्को,
इय अट्ठारस गुणेहिं संजुत्तो
पंच महव्वयजुत्तो,
पंचविहायारपालणसमत्थो

पंच समिओतिगुत्तो,
छत्तीसगुणो गुरू मज्झ ॥ २ ॥

पंचिंदिय संवरणो—त्वचा, जीभ, नाक, आंख और कान, इन पांच इन्द्रियोंके विकारोंको रोकनेवाला,

तह नवविह बंभचेरगुत्तिधरो--तथा नव प्रकारकी ब्रह्मचर्यकी गुप्तिको धारण करनेवाला.

चउव्विहकसायमुक्का—क्रोध, मान, माया, और लोभ, इन चार प्रकारके कषायोंसे मुक्त.

इअ अट्ठारस गुणेहिं संजुत्तो ॥१॥ ये उपर कहे हुए अठारह गुणोंसे संयुक्त ॥१॥

पंच महव्वयजुत्तो--पांच महाव्रतोंसे युक्त.

पंच विहायारपालणसमत्थो—पांच प्रकारके आचारपालनेमें समर्थ

पंच समिओ ति गुत्तो--पांच समिति और तीन गुप्तियोंसे युक्त,

छत्तीस गुणो गुरु मज्झ ॥२॥—इन छत्तीस गुणो सें युक्त मेरा गुरु है ॥ २ ॥

॥ अथ खमासमणो वा प्रणिपात ॥

इच्छामि खमासमणा वंदिउं जाव
णिज्जाए निसिहिआए
मत्थएण वंदामि ॥ १ ॥

इच्छामि खमासमणो--हे क्षमावंत तपस्वी ! मैं इच्छता हूँ.

वंदिउं जावणिज्जाए निसीहिआए--सब पाप कार्योंका निषेध करके शक्तिके अनुसार वंदन करनेको

मत्थएण वंदामि--और मैं मस्तकसे वंदन करता हूं.

॥ अथ इरियावहियं सूत्र ॥

इच्छाकारेण संदिसह भगवन् !
इरियावहियं पडिक्कमामि? इच्छं।
इच्छामि पडिक्कमिउं ॥१॥
इरियावहियाए विराहणाए ॥ २ ॥

इच्छाकारेण संदिसह भगवन् ! हे पूज्य गुरू महाराज! आपकी इच्छा से आज्ञा दीजिये कि.

इरियावहियं पडिक्कमामि—रास्ते में चलनें फिरनेसे की हुई जीवपीडनादि पापक्रियासे में हटूं ?

इच्छं—आपकी आज्ञा प्रमाण है.

गमणा–गमणे ॥ ३ ॥ पाणक्कमणे

बीअक्कमणे हरियक्कमणे

ओसा–उत्तिंग–पणग–दग–मट्टी–

मक्कडा संताणा संकमणे ॥ ४ ॥

गमणागमणे पाणक्कमणे—एक स्थानसे, दूसरे स्थानपर जाने आनेमें किसी प्राणिको दबानेसे,

बीयक्कमणे हरियक्कमणे—बीजको दबानेसे हरीत् वनस्पति को कुचलनेसे.

ओसा-उत्तिंग-पणग-दग-मट्टी-मक्कडा संताणासंकमणे—ओस, चींटीके बील, पांचो वर्णकी काई-नील फूल, कच्चापानी, सचित्त मिट्टी युक्त सचित्त पानी—कीचड, और मकडी की जालोंको कुचलनेसे-रौदनें से,

जे मे जीवा विरहिया ॥ ५ ॥

एगिंदिया, बे इंदिया, ते इंदिआ, चउरिंदिया पंचिंदिया ॥ ६ ॥

जे मे जीवा विराहिया—मैंने जिन जिन जीवोंकी विराधनाकी हो, यानि जो जो जीवको बाधा पहुंचाई हो। कौन कौन जीव ? वह कहते है-

एगिंदिया—एक इन्द्रिय वाले—पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, और वनस्पति.

बे इंदिया—दो इन्द्रिय वाले,—शंख, पूरा. अलसीया विगैरह.

ते इंदिया—तीन इन्द्रिय वाले, चींटी, कंथुआ मकोडा, खटमल गोझर, जू, विगैरह.

चउरिंदिया-चार इन्द्रिय वाले मक्खी, बींछू भँवरा, विगैरह.

पंचिंदिया--पांच इन्द्रियवाले सर्प, पशु पक्षी मनुष्य विगैरह.

अभिहया, वत्तिया, लेसिया, संघाइया, संघट्टिया, परियाविया, किलामिया, उद्दविया, ठाणाओ ठाणं संकामिया, जीवियाओ ववरोविया, तस्स मिच्छामि दुक्कडं ॥ ७ ॥

अभिहया--उपर कहे हुए एकेन्द्रियादि जीवोंमेंसे सामने आते हुए को मैंने मारे हो,

वत्तिया—किसी जीवोंको धूल आदिसे ढांके हो,—आच्छादित किये हो,

लेसिया—आपस—आपसमें अथवा जमीनके साथ मसले हो,

संघाइया—एक दुसरेंको इकठे किये हो,

संघट्टिया—छूकर यानि स्पर्शकर दुःख दिये हो,

परियाविया—परिताप—कष्टदिया हो,

किलामिया—थकाया हो, मृतप्राय किया हो.

उद्दविया—हैरान किया हो, त्रास दिया हो,

ठाणाओ ठाणं संकामिया—एक स्थानसे दूसरे स्थान पर उन्हें बूरी तरह रक्खा हो.

जीवियाओ ववरोविया--आउखासे छुडाया हो, यानि जीवन नष्ट किया हो,

तस्स मिच्छामि दुक्कडं—उसका पाप मेरेको मिथ्या हो, यानि इन जीवोंको किसी प्रकारका कष्ट पहूंचानेसे मेरको जो पाप लगा हो वह निष्फल हो,

॥ अथ तस्स उत्तरी ॥

तस्स उत्तरीकरणेणं, पायच्छित्त-करणेणं, विसोहीकरणेणं, विसल्ली-करणेणं, पावाणं कम्माणं, निग्घायण-ट्ठाए ठामि काउस्सग्गं ॥

तस्स उत्तरीकरणेणं—उस आत्माको श्रेष्ठ

उत्कृष्ट बनाने के निमित्त, अथवा उस पापकी विशेष शुद्धि—पुनः शुद्धि निमित्त,

पायच्छित्तकरणेणं—प्रायच्छित्त करनेके लिये.

विसल्लीकरणेणं—आत्माको शल्य रहित करनेके लिये,

पावाणं कम्माणं निग्घायणट्ठाए—सब पाप कर्मोंका नाश करनेके लिये,

ठामि काउस्सग्गं—मैं काय व्यापारका त्याग करने रूप—काउस्सग्ग—कायोत्सर्ग करता हूँ.

॥ अथ अन्नत्थ उससिएणं सूत्र ॥

अन्नत्थ उससिएणं, नीससिएणं, खासिएणं,छीएणं,जंभाइएणं; उड्डुएणं, वायनिसग्गेणं, भमलीए, पित्तमुच्छाए ॥ १ ॥

अन्नत्थ—अन्यत्र यानि नीचे लिखे हुए आगार–अपवादों सिवाय अन्य क्रियाओं द्वारा, तात्पर्यकि–नीचे लिखे हुए उच्छ्वासादि आगारोंसे काउस्सग्ग भंगका दोष नहीं लगता है परंतु उनसे अन्य क्रियाओंके सेवनसें काउस्सग्ग भंगका दोष लगता हैं। इन आगारोंसे कायिक व्यापारका मैं त्याग करता हुँ। कौन२ आगारकी छुट रखीगई हैं? सो निम्न कहते हैं।

ऊससिएणं—उच्छ्वाससे, उंचा श्वासलेनेसे।

नीससिएणं—निःश्वाससे, नीचा श्वास छोडनेसे, श्वास निकालने से।

खासिएणं छीएणं जंभाइएणं—खांसी आनेसे, छींक आनेसे, और—जंभाइ—जभाही—यानि उबासी आनेसे।

उड्डुएणं—ओडकार आनेसे,

वायनिसग्गेणं—पुंठद्वारा वायु सरनेसे, हवा छुट होने से।

भमलीए पित्तमुच्छाए—चक्कर आनेसे, पित्तके प्रकोपसे मूर्च्छा आनेसे।

सुहूमेहिं अंगसंचालेहिं, सुहूमेहिं खेलसंचालेहिं, सुहूमेहिं दिट्ठिसंचालेहिं ॥ २ ॥ एवमाइएहिं आगारेहिं अभग्गो अविराहिओ हुज्ज मे काउस्सग्गो ॥ ३ ॥

सुहूमेहिं अंगसंचालेहिं—सूक्ष्म प्रकारसे अंगका संचारसे, शरीरका सूक्ष्म हलन-चलनसे.

सुहूमेहिं खेलसंचालेहिं—सूक्ष्म कफ या थूंककासंचारसे.

सुहूमेहिं दिट्ठिसंचालेहिं—दृष्टिका सूक्ष्म संचारसे, आंखकी कोकी या भौंमांपणी वगैरह सूक्ष्म चलनेसे.

एवमाइएहिं आगारेहिं—ये वगैरह आगारों

अपवादोंसे, यानि इन पूर्वोक्त आगारोंसे आदि शब्दसे दूसरेभी आगारोंसे, (अन्नत्थ–अन्य क्रियाओं द्वारा)

अभग्गो अविराहिओ––अभंग और विराधना रहित यानि संपूर्ण.

हुज्ज मे काउस्सग्गो––मेरा काउस्सग्ग हो.

जाव अरिहंताणं, भगवंताणं, नमुक्कारेणं, न पारेमि ॥ ४ ॥

ताव कायं, ठाणेणं, मोणेणं झाणेणं अप्पाणं वोसिरामि ॥५॥

जाव––जब तक

अरिहंताणं भगवंताणं नमुक्कारेणं—भग-

वान् अरिहंतोको नमस्कार करनेसे, यानि नमो अरि-ताणं ऐसा शब्द द्वारा नमस्कार करके

न पारेमि--काउस्सग्गको न पारूं--पूर्ण न करूं।

ताव--तब तक।

कायं ठाणेणं मोणेणं झाणेणं अप्पाणं--'अप्पाणं कायं' यानि अपनी कायाको, स्थिरस्थान द्वारा यानि स्थिर रहकर, मौन द्वारा यानि मौन रह-कर, और ध्यानद्वारा यानि ध्यान धरकर.

वोसिरामि--वोसराताहूँ, यानि अपना शरी-रको अशुभ कार्यसे निवृत्त--अलग करता हूँ। तात्पर्य कि--'नमो अरिहंताणं' शब्दद्वारा नमस्कार कर के

काउस्सग्गको पूर्ण न करूं तब तक मैं शरीरसे निश्चल बनकर, वचनसे मौन रहकर, और मनसे शुभ ध्यान धरकर पापकारी सब अशुभ कामोंसें हट जाता हुं।

॥ अथ लोगस्स वा नामस्तव ॥

लोगस्स उज्जोअगरे,
धम्मतित्थयरे जिणे ॥
अरिहंते कित्तइस्सं,
चउव्विसंपि केवली ॥ १ ॥

लोगस्स उज्जोअगरे——लोकमें यानि स्वर्ग, मृत्यु, और पाताल इन तीनो जगतमें धर्मका उद्योत करने वाले।

धम्म तित्थयरे जिणे—धर्मरूप तीर्थको स्थापन करने वाले, रागद्वेषादि अंतरंग शत्रुओंको जीतने वाले, ।

अरिहंते कित्तइस्सं, चउवीसंपि केवली॥ १॥ ऐसे चौवीसों केवलज्ञानी तीर्थंकरोंकी मैं स्तुति करूंगा —कीर्तन करूंगा.

उसभमजिअं च वंदे,
संभवमभिणंदणं च सुमइं च ।
पउमप्पहं सुपासं,
जिणं च चंदप्पहं वंदे ॥ २ ॥

उसभमजिअं च वंदे—श्री ऋषभदेव स्वामी को, और श्री अजितनाथ भगवानको मैं वंदन करता हूं ।

संभवमभिणंदणं च सुमइं च—श्री संभवनाथ प्रभुको, श्री अभिनंदन प्रभुको, और श्री सुमतिनाथ प्रभुको,

पउमप्पहं सुपासं——श्री पद्मप्रभस्वामी को, श्री सुपार्श्वनाथ प्रभुको,

जिणं च चंदप्पहं वंदे ॥२॥—रागद्वेषको जीतनेवाला श्री चन्द्रप्रभ भगवानको मैं वंदन करता हूं.

सुविहिं च पुप्फदंतं,
सीयल सिज्जंस वासुपुज्जं च ।
विमलमणंतं च जिणं,
धम्मं संतिं च वंदामि ॥ ३ ॥

सुविहिं च पुप्फदंतं——जिनका दूसरा नाम पुष्पदंत हैं ऐसे श्री सुविधिनाथ प्रभुको ।

सियल सिज्जंस वासुपुज्जं च—श्री शीतलनाथ, श्री श्रेयांसनाथ और श्री वासुपूज्य प्रभुको।

विमलमणंतं च जिणं, धम्मं संतिं च वंदामि ॥३॥ श्री विमलनाथ प्रभु, श्री अनंतनाथ प्रभु, राग—द्वेषको जीतने वाले श्री धर्मनाथप्रभु, और श्री शांतिनाथ प्रभुको मैं वंदन करता हूँ ॥ ३ ॥

कुंथुं अरं च मल्लिं,
वंदे मुणिसुव्वयं नमिजिणं च ।
वंदामि रिट्ठनेमिं,
पासं तह वद्धमाणं च ॥ ४ ॥

कुंथुं अरं च मल्लिं—श्री कुंथुनाथ प्रभु, श्री अरनाथ प्रभु, और श्री मल्लिनाथ स्वामी को।

वंदे मुणिसुव्वयं नमिजिणं च——श्री मुनिसुव्रतस्वामी, और रागद्वेषको जीतनेवाले श्री नमिनाथ प्रभुको मैं वंदन करता हूँ।

वंदामि रिट्ठनेमिं, पासं तह वद्धमाणं च ॥४॥——अरिष्टनेमि यानि श्री नेमिनाथ प्रभुको, श्री पार्श्वनाथ प्रभुको, और श्री वर्द्धमान स्वामीको यानि श्री महावीर स्वामिको मैं वंदन करता हूँ ॥४॥

एवं मए अभिथुआ
विहुयरयमला पहीणजरमरणा।
चउव्विसंपि जिणवरा,
तित्थयरा मे पसीयंतु ॥ ५ ॥

एवं मए अभिथुआ——इस प्रकार मेरे द्वारा स्तवना किये गये यानि मैंने स्तुति की हैं।

विहुअरयमला पहीणजरमरणा—जो कर्म-रूप रज और मैलसे रहितहैं, और जो बुढापा तथा मरणसे मुक्त हैं।

चउवीसंपि जिणवरा, तित्थयरा मे पसी-यंतु ॥ ५ ॥——और जो सामान्य केवलीओं में श्रेष्ठ है, ऐसे चौवीसें तीर्थंकर भगवान् मेरे पर प्रसन्न हो ॥ ५ ॥

कित्तिय वंदिय महिया,
जे ए लोगस्स उत्तमा सिद्धा ।
आरूग्गबोहिलाभं,
समाहिवरमुत्तमं दिंतु ॥ ६ ॥

कित्तिय वंदिय महिया——जा इन्द्रादिसे

कीर्त्तन किये गये हैं, वंदन किये गये हैं और पूजन किये गये हैं।

जे ए लोगस्स उत्तमा सिद्धा—जो संपूर्ण लोक में उत्तम हैं, और सिद्ध हुए हैं यानि सिद्धिको प्राप्त हुए हैं वे भगवान् मुझको.

आरूग्ग बोहिलाभं—आरोग्यका, और सम्यक्त्व के लाभ को,

समाहिवरमुत्तमं दिंतु ॥ ६॥—और प्रधान—उत्तम समाधिको देवें, अथवा समाधिका श्रेष्ठ वरदान देवें ॥ ६ ॥

चंदेसु निम्मलयरा,
आइच्चेसु अहियं पयासयरा।
सागरवरगंभीरा सिद्धा
सिद्धिं मम दिसंतु ॥ ७ ॥

चंदेसु निम्मलयरा--जो चन्द्रोसे विशेष निर्मल हैं।

आइच्चेसु अहियं पयासयरा--जो सूर्योंसे अधिक प्रकाश करने वाले.

सागरवरगंभीरा--और जो बडा समुद्र यानि स्वयंभूरमग नामक महासमुद्र के समान गंभीर हैं

सिद्धा सिद्धिं मम दिसंतु ॥ ७ ॥ ऐसे सिद्ध परमात्मा मुझको मोक्ष दें, अर्थात् सिद्ध परमात्माका आलंबनसे मुझको मोक्षपद प्राप्त हो, ॥७॥

॥ अथ पडिलेहणा ॥

१ इच्छामि खमासमणो वंदिउं जावणि-

ज्जाए निसीहिआए मत्थएण वंदामि ॥ इच्छा-
कारेण संदसह भगवन् पडिलेहणं संदिस्साए
मि ॥ इच्छं ॥

२ इच्छामि खमासमणो वंदिउं जावणि-
ज्जाए निसीहिआए मत्थएण वंदामि ॥ इच्छा-
कारेण संदिसह भगवन् पडिलेहणं करेमि
इच्छं ॥

(पीछे मुहपत्तिकी २५ पडिलेहणा तथा
शरीरको २५ पडिलेहणा करते समय नीम्न लीखित
पचास बोल चिन्तवे)

॥ पडिलेहणाके ५० बोल ॥

मुहपत्तिकी २५ पडिलेहणाः—समय-

क्त्वमूल निर्मल दृष्टे जीव जोइ जयणा करूं. (एम कही दृष्टि पडिलेहना करवी) सम्यक्त्व मोहनीय, मिश्रमोहनीय, मिथ्यात्व मोहनीय परिहरूं ॥ काम राग, स्नेह राग, दृष्टि राग परिहरूं ॥ सुदेव, सुगुरू, सुधर्म आदरूं ॥ कुदेव, कुगुरू, कुधर्म परिहरूं ॥ ज्ञान, दर्शन, चारित्र आदरूं ॥ ज्ञान विराधना, दर्शन विराधना, चारित्र विराधना परिहरूं ॥ मनोगुप्ति वचनगुप्ति, कायगुप्ति आदरूं ॥ मनोदंड, वचनदंड, कायदंड परिहरूं ॥

अंगकी २५ पडिलेहणा—हास्य रति अरति, परिहरूं ॥ भय, शोक, दुगच्छा परिहरूं ॥ कृष्ण लेश्या, नील लेश्या, कापोत लेश्या

परिहरूं ॥ ऋद्धिगारव, रसगारव, सातगारव परिहरूं ॥ मायाशल्य, नियाणशल्य, मिथ्यात्वशल्य परिहरूं ॥ क्रोध, मान परिह ॥ माया, लोभ, परिहरूं ॥ पृथ्वीकाय अपकाय, तेउकाय, वाउकाय, वनस्पतिकाय, त्रसकाय विराधना परिहरूं ॥ (पीछे) ॥

१ इच्छामि—खमासमणो वंदिउं जावणिज्जाए निसिहिआए मत्थएण वंदामि ॥ इच्छाकारेण संदिसह भगवन् सामाइयं संदिस्साएमि ॥ इच्छं ॥

२ इच्छामि खमासमणो वंदिउं जावणिज्जाए निसीहिआए मत्थएण वंदामि ॥ इच्छाकारेग संदिसह भगवन् सामाइयं ठाएमि ॥ इच्छं ॥

(बाद में एक नवकार गीनें पीछे निम्न लिखे मुताबिक कहें)

इच्छाकारेण संदिसह, भगवन् ! सामायिक दंडक उच्चरावोजी ॥ ऐसा कह करके सामायिक दंडक उच्चरें ॥

॥ अथ करेमिभंते सूत्र वा सामायिक का पच्चक्खाण ॥

करेमि भंते ! सामाइयं । सावज्जं जोगं पच्चक्खामि जाव नियमं पज्जुवासामि दुविहं तिविहेणं ॥

करेमि भंते ! सामाइयं—हे भगवन् ! [मैं सामायिक ग्रहण करता हूँ]।

सावज्जं जोगं पच्चक्खामि—इस लिये पाप युक्त व्यापारका मैं निषेध करता हूँ—त्याग करता हूँ।

जाव नियमं पज्जुवासामि—जब तक मैं इस नियमका सेवन करूं तब तक.

दुविहं तिविहेणं—तीन प्रकारके योगसे, दो प्रकारके करणका त्याग करता हूँ।

कौनसे तीन प्रकारके योगसे और दो प्रकारके करणका त्याग करता हूं? सो कहते हैं.

मणेणं वायाए काएणं। न करेमि न कारवेमि। तस्स भंते! पडिक्कमामि निन्दामि गरिहामि अप्पाणं वोसिरामि॥

मणेणं वायाए काएणं—मन, वचन, और काया ये तीन प्रकारके योगसे।

न करेमि न कारवेमि—में स्वयं पाप व्या-

पारको न करूं, और दुसरों से न कराउं। यानि पाप व्यापारको स्वयं करना और दूसरांसे कराना. इन दोनों क्रियाका त्याग करता हूँ।

तस्स भंते! पडिक्कमामि—हे भगवन्! उस पूर्वकृत पापसें मैं निवृत्त होता हूं।

निंदामि गरिहामि-आत्म साक्षिसे उस अपराधकी निन्दा करता हूं, यानि हृदयपूर्वक उसे बूरा समजता हूं, गुरू महाराज के सामने गुरु महा-राजकी साक्षिसे उस पापकी विशेष निन्दा करता हूँ।

अप्पाणं वोसिरामि-इस प्रकारसे मैं अपने आत्माको पाप क्रियासे हटाता हूँ-छूडाता हूँ॥

ॐ

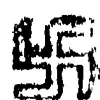
॥ श्री वीराय नमः ॥

॥ अथ सामायिक लेनेकी विधि ॥

प्रथम यदि स्थापनाचार्यजी न हो तो उंचे आसन पर पुस्तक आदि स्थापन करके श्रावक श्राविका, सामायिक लेनेके पहिले शुद्धवस्त्र पहैन कर, जमीन पुँजकर आसन बिछावे और चरवला मुहपत्ति लेकर उस आसन पर बैठे, बाद दाहिने हाथमें मुहपत्ति मुख के आगे रखकर जीमना हाथको स्थापनाके सामने रखकर, एक नवकार गीनकर पंचिंदियसें स्थापना स्थापे। बादमें खमास-

मण देकर इच्छाकारेण संदिसह भगवन् इरि-
यावहियं० तस्सउत्तरी० अन्नत्थ० कहकर एक
लोगस्सका काउस्सग्ग करे, काउस्सग्ग पारकर
प्रगट लोगस्स कहें। बादमें खमासमण देकर
इच्छाकारेण संदिसह भगवान् मुहपत्ति पडि-
लेहणं करेमि? इच्छं० एसा कहकरके पडि-
लेहण करें। पीछे खमासमण देकरके इच्छा-
कारेण संदिस्सह भगवन सामाइयं संदिसा
हमि? इच्छं. और खमासमण देकर इच्छा०
सामाइयं ठाएमि० इच्छं० ऐसा कहकर दोनों
हाथ जोडकर एक नवकार गीनकर इच्छा-
कारेण संदिसह भगवन सामायिक दण्डक
उच्चरावोजी. पीछे करेमिभंते० कहकर खमा-
समण देकर इच्छाकारेण संदिस्सह भगवन

बेसणे संदिसाएमि ? दूसरे खमासमणे बेसणे ठाएमि ? इच्छं. एसा कहकर दो खमासमण देकर सज्झायं संदिसाएमि ? सज्झायं करेमि० एसा कहकर दो घडी सज्झाय धर्म ध्यान में लीन होवे.



॥ अथ सामायिक पारनेकी विधि ॥

प्रथम चरवला लेकर खडे होकर खमासमण देकर इरियावहियं पडिकमें यावत् काउस्सग्ग करके लोगस्स तक कहें. पीछे खमास० इच्छाका० सामायिक पारनेको मुहपत्ति पडिलेहण करूं ऐसा कहकर मुहपत्तिको पडिलेहे खमासमण देवें. बाद

इच्छाकारेण संदिस्सह भगवन् सामायिक पारूं ? गुरू कहे **पूणोवि कायव्वं** श्रावक कहे यथा शक्ति दूसरा खमासमण देकरके **सामायिक पूरूं** ? गुरु कहे **आयारो न मोत्तव्वो** श्रावक कहे **तहत्ति** पीछे जीमना हाथ नीचे स्थापन करके एक नवकार गीने, बाद

॥ अथ सामाइअ वयजुत्तो ॥

सामाइय वयजुत्तो

जाव मणे होइ नियमसंजुत्तो ।

सामयिक व्रतसे युक्त जहांतक मनमें हो नियम सहित.

छिन्नइ असुहं कम्मं,

सामाइअ जत्तिआ वारा ॥१॥

छेदता हैं अशुभ कर्मको सामायिक जितनी वार करे उतनी वख्त.

सामाइयंमि उ कए,

समणो इव सावओ हवइ जम्हा ।

सामायिक पुनः करते समय, साधुके समान श्रावक होता है, जिस कारण,

एएण कारणेणं,

बहुसो सामाइयं कुज्जा ॥२॥

इस कारणसे अनेकवार सामायिक करना.

पीछे सामायिक व्रत विधिसे लिया, विधिसे पारा, विधि करते जो कोइ अविधि आशातना हुइ हो, तस्स मिच्छामि दुक्कडं. दस मनके, दस वचनके, बारह कायाके एवंकारे बत्तीस दुषणमें से जो कोइ दूषण लगा हो तस्स मिच्छामि दुक्कडं. कहकर तीन नवकार गीनें ॥ इति ॥

॥ अथ चैत्यवंदन करनेका विधि ॥

(जैन मंदिरमें)

प्रथम तीन खमासमण देकर, पीछे इच्छाकारेण संदिसह भगवन् ! चैत्यवंदन करूं, ऐसा कहकर चैत्यवंदन कहें, पीछे जंकिंचि० कहनके बाद दाहिना घुटना भूमिसे अधर रहे ऐसी मुद्रासे बैठकर दोनों हाथ मिलाकर, उत्तरासण मुखके आगे रखकर उपयोगसे **नमुत्थुणं** कहें. पीछे **जावंति चेइयाइं जावंत केवि साहू** कहकर **"अनंतासिद्धने मारो नमस्कार होजो"** पीछे **इच्छामि० इच्छाकारेण० स्तवनं संदिसाएमि, इच्छामि० इच्छाकारेण० स्तवनं भणेमि०** एक नवकार गीनकर

स्तवन कहें पीछे **जयवीयराय** कहकर वादमें खडे होकर **सव्वलोए अरिहंत चेइयाणं** कहकर **अन्नत्थ** कहकर एक **लोगस्सका** काउस्सग्ग करके **नमो अरिहंताणं**" कहकर थुइ (स्तुति) कहें पीछे खमासमण देकर यदि गुरूके पास पच्चक्खान लिया हो, और लेनेकी इच्छा हो तो उसका उपयोग करें, बादमें

"अरिहंतो महदेवो, जावजीवं सुसाहुणोगुरूणो ॥
जिणपन्नत्तं तत्तं, इय सम्मत्तं मये गहियं ॥१॥

इत्यादिक भावना भावें, बाद जैसे परमात्माकी ओर पीठ न हो ऐसी रीतिसे बाहर निकलते हुए पिछले पैरोंसे निकलना चाहिए ॥ इति ॥

॥ अथ चैत्यवंदनो ॥

श्रीपार्श्वनाथो भवपापताप-
प्रशांतधाराधरचारुरूपः ॥
विघ्नौघहंता प्रणतोरगेन्द्रः
समस्तकल्याणकरो जिनेन्द्रः ॥१॥

(२) जो धुरि सिरि अरिहन्त मूल, दृढ पीठ पइट्ठियो ॥ सिद्ध सूरि उवज्झाय साहू, चउ साह गरिट्ठओ ॥१॥ दंसण नाण चरित्त तवहिं, पडिसाहाहिं सुन्दरु ॥ तत्तक्खर सर-वग्गलद्धि, गुरुपयदलदम्बरु ॥२॥ दिसिवाल जक्ख जक्खिणि, सुरकुसुमेहिं अलंकिओ ॥ सो सिद्धचक्कगुरु कप्पतरु, अम्ह मणवंछिय दिअओ ॥ ३ ॥

॥ अथ जं किंचि ॥

जं किंचि नामतित्थं सग्गे पायालि तिरिय लोयम्मि ॥

जो कोई नामरूप तीर्थ, स्वर्गमें पातालमें तीर्च्छालोक में,

जाइं जिणबिंबाइं, ताइं सव्वाइं वंदामि ॥ १ ॥

जो—जितने जिन बिंबों उतने—उन सबको मैं वंदन करता हूँ

॥ अथ नमुत्थुणं वा शक्रस्तव ॥

नमुत्थुणं अरिहंताणं भगवंताणं ॥ १ ॥

नमस्कार हो अरिहंतोंको भगवंतोंको ॥ १ ॥

आइगराणं तित्थयराणं सयंसंबुद्धाणं ॥ २ ॥

तीर्थकी आदि करनेवालेको, तीर्थंकरोंको, अपने आप ही बोधको पाये हुएको,

पुरिसुत्तमाणं पुरिससीहाणं पुरिसवर-पुण्डरीयाणं

पुरुषोंमें श्रेष्ठको, पुरुषोंमें सिंह समान को, पुरुषोंमें श्रेष्ठ कमलके समानको,

पुरिसवरगंधहत्थीणं ॥३॥

पुरुषोंमें श्रेष्ठ गन्धहस्तिके समानको ॥ ३ ॥

लोगुत्तमाणं लोगनाहाणं लोगहियाणं

लोकोंमें उत्तमको, लोकके नाथको, लोकका हित करने वालेको,

लोगपईवाणं लोगपज्जोअगराणं ॥४॥

लोकमें दीपक समानको, लोकमें अतिशय उद्योत करने वालेको,

अभयदयाणं चक्खुदयाणं मग्गदयाणं,

अभयदान देनेवालेको, ज्ञानरूपनेत्रदेनेवालेको, मोक्षमार्ग देनेवालेको,

सरणदयाणं जीवदयाणं बोहिदयाणं ॥५॥

शरणदेनेवालेको, संजम जीवितव्यको देनेवालेको, बोहि यानि समकित देनेवालेको.

धम्मदयाण धम्मदेसयाणं धम्मनायग्गणं,

धर्म देनेवालेको, धर्मके उपदेशकको, धर्मके नायकको,

धम्मसारहीणं धम्मवरचारंतचक्कवट्टीणं॥६॥

धर्मके सारथीको, चारों चारगतिके दिशाके अन्त तक श्रेष्ठ धर्म चक्रवर्तीको, अंतकरने वाले उत्तम धर्म चक्रवर्त्तिको.

दीवो ताणं सरण गइ पइट्ठा

द्वीपसमान रक्षणकरनेवाले शरणरूप गतिरूप आधाररूप,

अप्पडिहय वरनाणदंसणधराणं वियट्ट छउमाणं ॥ ७ ॥

अस्खलित श्रेष्ठ ज्ञानदर्शनको धारण करनेवा-लेको, घातिकर्म रहितको;

जिणाणं जावयाणं तिन्नाणं तारयाणं

जिनोंको जय करानेवालेको, तरे हुएको तारने वालेको

बुद्धाणं बोहयाणं मुत्ताणं मोअगाणं ॥८॥

तत्त्वोंको जानने वालेको, बोध करानेवालेको, कर्मसे मुक्त, कर्मसे छुडाने वालेको.

सव्वन्नूणं सव्वदरिसीणं सिवमयल-मरूअमणंत-

सर्वज्ञको सर्वदर्शीको निरुपद्रव निश्चल रोग-रहित अनन्त

मक्खय, मव्वाबाहमपुणराविति सिद्धि गइनामधेयं ठाणं संपत्ताण।

अक्षय, अव्याबाध, पुनरागमनरहित सिद्धिगति नामक स्थानको प्राप्त हुए,

नमो जिणाणं जियभयाणं ॥९॥

नमस्कार हो जिनेश्वरोंको भयको जीतने वालेको.

जे अ अइआ सिद्धा जे अ भविस्संतिणा-गए काले ॥

जो अतीत सिद्ध जो (भविष्यकालमें) अना-गत कालमें होंगे

संपइअ वट्टमाणा। सव्वे तिविहेण वन्दामि

वर्तमान कालमें विद्यमान हैं उन सबको तीन प्रकारसे वन्दन करता हूँ.

॥ अथ जावंति चेइआइं ॥

जावंति चेइआइं उड्ढे अ अहे अ तिरिय-लोए अ।

जितने चैत्यों ऊर्ध्व और अधो और तिर्छे लोकमें और

सव्वाइं ताइं वंदे, इह संतो तत्थ संताइं

उन सबको वंदन करताहूं यहां रहा हुआ वहां रहे हुए.

॥ अथ जावंत केवि साहू ॥

जावंत केवि साहू, भरहेरवयमहाविदेहे य ।

जितने कोई भी साधुओं भरत ऐरवत महाविदेह क्षेत्रमें और

सव्वेसिं तेसिं पणओ तिविहेण तिदंडविरयाणं ॥१॥

उन सबको मैंने नमन किया त्रिविधे तीन दंडसे निवृत्त.

(सब अनंता सिद्धोंको मेरा नमस्कार होजो एसा कह कर खमासमणपूर्वक **इच्छाकारेण स्तवनं संदिसाएमि, स्तवनं** भणेमि कहें और एक नवकार गिणके स्तवन कहें.)

॥ श्रीचिन्तामणी पार्श्वनाथजीनुं स्तवन ॥१॥

(हिरज्झाका चाल.)

चिन्तामण स्वामी,
अरज हमारी सुन लीजीये ॥ चिन्तामण०
तुम राजा हम प्रजा तुमारी,
निशदिन करते सेवा ॥
सुनजर करके मुंजकुं दीजे,
अविचल सुखका मेवा ॥ हो चिन्ता०॥१॥
तुम शिववासी हम जगवासी,
एही बडा अन्धेरा ॥
इसकुं आप विचारो मनमें,
कैसे होय निवेरा ॥ हो चिन्ता० ॥२॥

दीनानाथ दयाल कहावो,
जगजीवन जिनराया ॥
एसा विरुद तुमारा साहिब,
सबही के मन भाया ॥ हो चिन्ता ॥३॥
चरणकमलकी सेवा चाहुं,
एह विनति मोरी ॥
कहत अबीरकृपा जिनवरकी,
लागी मुगतिकी डोरी ॥ हो चिन्ता० ॥ ४ ॥

॥ अथ जयवीयराय ॥

जय वीयराय ! जगगुरु !
होउ ममं तुह पभावओ भयवं ।

आपकी जय हो ! । हे वीतराग ! हे भगवन् हे जगतके गुरु आपका प्रभावसे मुझको

भवनिव्वेओ मग्गा-
णुसारिया इट्ठफलसिद्धी ॥ १ ॥

संसारसे वैराग्य, मार्गानुसारिपना, इष्ट फलकी सिद्धि.

लोगविरुद्धच्चाओ,
गुरुजणपूआ-परत्थकरणं च ।

लोकसे विरुद्ध कृत्योंका त्याग, गुरुजनकी पूजा, परोपकार और

सुहगुरुजोगो तव्वय-
णसेवणा आभवमखंडा ॥ २ ॥

शुभ गुरुका योग, उनके वचनका सेवन, मोक्ष प्राप्ति तक अखंड रूपसे.

वारिज्जइ जइवि निया-
णबंधणं वीयराय तुह समए ।

निषेध किया है, यद्यपि, नियाणा बांधनेका, हे वीतराग ! आपके सिद्धांतमें.

तहवि मम हुज्ज सेवा,

भवे भवे तुम्ह चलणाणं ॥ ३ ॥

तो भी मुझको हो सेवना, जन्म जन्ममे, आपके चरणोंकी.

दुक्खखओ कम्मखओ,

समाहिमरणं च बोहिलाभो अ ।

दुःखका क्षय, कर्मका क्षय, समाधिमरण और बोधिका लाभ और.

संपज्जउ मह एअं,

तुह नाह पणामकरणेणं ॥ ४ ॥

प्राप्त हो मुझको यह, आपको हे नाथ ! प्रणाम करनेसे.

सर्वमंगलमांगल्यं, सर्वकल्याणकारणम् ।

सब मंगलोंमें मंगलिक, सब कल्याणोंका कारण निमित्त.

प्रधानं सर्वधर्माणां, जैनं जयति शासनम्

श्रेष्ठ सब धर्मोमें जिनेश्वरका जयवंता वर्तता है शासन.

॥ अथ सव्वलोए अरिहंत चेइयाणं ॥

सव्वलोए अरिहंत चेइयाणं करेमि काउस्सग्गं ॥ १ ॥

सब लोकमें श्री अरिहंत भगवानकी प्रतिमाओ को मैं करता हूं काउस्सग्ग

वंदणवत्तियाए पूअणवत्तियाए सक्कारव-त्तियाए ।

वंदन निमित्ते, पूजन निमित्ते, सत्कार निमित्ते,

सम्माणवत्तियाए बोहिलाभवत्तियाए निरुवस्सग्गवत्तियाए ॥ २ ॥

सन्मान निमित्ते, सम्यक्त्वकी प्राप्ति निमित्त, उपसर्गरहितपणा (मोक्ष) निमित्त.

श्रद्धाए मेहाए धिइए धारणाए, अणुप्पेहाए ।

श्रद्धासे, निर्मल बुद्धिसे, धैर्यसे, धारणासे, तत्वकी विचारणासे,

वड्ढमाणीए ठामि काउस्सगं ॥ ३ ॥

चढते भावसे करता हूं काउस्सग.



अथ स्तुति.

सिद्धार्थ राय त्रिशलासुत नित्य वंदो,
आनन्दकारक सदा चरणारविन्दो,
जे शासनेश्वरतणो उपकार पामी,
पूजु प्रभु चरण श्रीमहावीरस्वामी ॥१॥

॥ अथ गुरुवन्दन करनेकी विधि ॥

प्रथम दो खमासमण देवें, बादमें खडे होकरके "इच्छाकार भगवन् सुहराइ सुह देवसि सुख तप शरीर निराबाध सुख संजमजात्रा निर्वहो छो जी ॥

हे गुरु महाराज, में इच्छता हूं कि—आपको सुखसे रातमें, सुखसे दिनमें सुखसे तपस्यामें, शरीर

की पीडा रहितपणे, सुखसे संयम यात्रामें आप निर्वाह करते हो ?

हे स्वामी आपको सुखशांति है ? भातपानीका लाभ देनाजी—अब मैं प्रार्थना करता हूं कि मेरे घरसे आहार और पानी लेकर धर्म लाभ देनेकी कृपा करे। उस (सूत्र) से गुरुको सुख साता पूछे, बादमें एक खमासमण देकरके,

।अथ अब्भुट्ठिओ (गुरुखामण) सूत्र।

इच्छाकारेण संदिसह भगवन् अब्भुट्ठिओहं अब्भिन्तर

इच्छापूर्वक आज्ञा दीजिये हे पूज्य ! उद्यमवंत तत्पर हुआ हूं मैं; अंदर

देवसिअं खामेउं । इच्छं खामेमि देवसिअं ।

दिनके किये हुए खमानेके लिये मैं । खमाता हूं दिवस संबंधी आपकी आज्ञाको इच्छता हूं । अपराधको.

जं किंचि अपत्तिअं, परपत्तिअं भत्ते, पाणे विणए ।

जो कुछ अप्रीतिसे विशेष अप्रीतिसे आहारमें पानीमें विनयमें

वेयावच्चे, आलावे, संलावे उच्चासणे,

सेवा-सुश्रुषामें, एक बार बोलनेमें, उच्चे आसन पर बैठनेमें,

समासमणे, अंतरभासाए, उवरि भासाए

समान आसनपर वेठनेमें संभाषण के बीच बोलनेमें संभाषणके बाद विस्तारसे बोलनेमें ।

जं किंचि मज्झ विणयपरिहाणं सुहुमं

जो कुछ मुझसे विनय रहितपनेसे सूक्ष्म

वा वायरो वा तुब्भे जाणह, न याणामि,

अथवा बादर अथवा, आप जानते हो मे नहीं जानता

तस्स मिच्छामि दुक्कडं ।

उसका मिथ्या मुझको पाप.

इति स्वभावें, पीछे यथाशक्ति " पच्चक्खाण " करके खमाखमण देवें ॥ इति ॥



॥ श्रावकका २१ गुण ॥

१ क्षुद्रमतिवाळा नहीं हूवे, किंतु गंभीर चित्तवाला होय.

२ रूपवंत-सर्व अंग संपूर्ण होय.

३ सौम्यप्रकृतिवाला होय.

४ लोकोंको वल्लभ लागे, प्रशंसा करवा जोग हुवे.

५ क्रूर नहीं-असंक्लेशित चित्त होय.

६ इहलोक परलोकके अपयशसें डरे.

७ अशठ (परकुं ठगे नहीं)

८ परकी प्रार्थनाका भंग न करे

९ लोकोत्तर लौकिक लज्जावंत होवे.

१० दयालु-सर्वपर दया रक्खे.

११ सौम्यदृष्टो यथा वस्तु विचारकी दृष्टी रखे.

१२ गुणोंका रागी होय.

१३ सत्यकथा, धर्मकथाका केणहार होय.

१४ सुशील अनुकूल परिवार युक्त होय.

१५ दीर्घदर्शी, ऊंडा विचार करके भला कार्य करे.

१६ पक्षपात रहित गुणदोष विशेषको जाणे.

१७ वृद्धपुरुष भला मतिवंतका सेवन करने वाला होवे.

१८ विनयवंत गुणी पुरुषका विनयादि करे.

१९ किये उपगारका बदला उतारे (कृतज्ञ)

२० निर्लोभीपणे पर उपगार करे.

२१ लब्धलक्ष–धर्म अनुष्ठान व्यवहारका लक्ष जिसको प्राप्त हो.

॥ मार्गानुसारीका ३५ बोल ॥

१ न्याय संपन्न विभव–न्यायसे धन इकट्ठा करना (स्वामिद्रोह, मित्रद्रोह, विश्वासिको ठगना, चौरी करना, थापनको ओलना विगैरह ।नन्दापात्र कार्यका त्याग करके धनका उपार्जन करना).

२ शिष्टाचार प्रशंसा–उत्तम पुरुषोंका आचरणोंको बखानना.

३ समानकुलाचारवाला किंतु अन्यगोत्रीकी साथ व्याह करना.

४ पापोंके कर्मसे डरना.

५ प्रसिद्ध देशाचारवत् वर्तना.

६ किसीका अवर्णवाद न बोलो.

७ जिस घरमें प्रवेशनेका और बाहर आनेका अधिक रास्ता नहीं और जो घर अतिगुप्त और अति प्रगट न हो और पडोशि अच्छे हो एसा घरमें रहना.

८ सदाचारी पुरुषोंकी सोबत करनी.

९ मातापिताकी पूजा करनी—(उनकी सर्व रीतिसे विनयी भावसे और उन्हें प्रसन्न रखना.

१० उपद्रवी स्थानोंको त्यागना—(लडाई. दुष्काळ, वगैरह दुःखद स्थानोंको छोडना.

११ निंदित कार्यमें नहि प्रवर्तना (निंदायोग्य कर्मको त्यागना)

१२ जैसी आवक वैसाही खर्चा करना

१३ द्रव्यको अनुसरके वेष रखना—आवक सरिखे पोषाक पहिनना.

१४ अष्ट प्रकारके बुद्धिका गुणोंको सेवन करना सो अष्टगुन के नांम १ शास्त्र सुननेकी इच्छा, २ शास्त्रका श्रवण करना, ३ शास्त्रका अर्थ समझना. ४ उनको याद रखना, ५ उह—त्यां तर्क-करना वो सामान्य गुण ६ अपोह (विशेषज्ञान), ७ उहापोहसे संदेह न रखना, ८ तत्त्वज्ञान (यह वस्तु इस तरह है ऐसा निश्चय करना).

१५ नित्य धर्मका श्रवण करना इससे बुद्धि निर्मल होय.

१६ पहेले जो भोजन जीमा उनका पचाव होनेक बाद नया भोजन करना.

१७ जीस वख्त बरोबर क्षुधा लगे उसी टाईम खाना किंतु एकदफा खाया फिर तूर्तही मिठाइ वगैरह देखकर लालचसे खाना नहीं, मतलब यह है कि तूर्तहि खानेसे अपचा होता है.

१८ धर्म, अर्थ और काम इन तीन वर्गोंको साधना.

१९ अतिथि और कदर्योंको अन्नपानादि देना.

२० हरहमेश अभिनिवेषसे युक्त नहिं रहना.

(किसिको पराभव करनेका परिणामसे अनितीसे कर्मका आरंभ न करना.

२१ गुणी जनोंका पक्षपात करना (उन्हे बहु मान्य करना.

२२ निषिद्ध देशकालको त्यागना (राजा और प्रजासे निषिध किया देशकालको नहि जाना.

२३ स्वशक्त्यानुसार कर्मका आरंभ करना.

२४ पालनके योग्य मातापिता, स्त्री, पुत्रादिकोंका लालनपालन करना.

२५ वृत्तमें रहनेवाले और ज्ञानवृद्ध सज्जनोंका अर्चन करना (उन्होंका अच्छी तरह विनय युक्त रहना)

२६ दीर्घदर्शी अर्थात् (जो काम करना तहां दीर्घदृष्टीसे शुभाशुभ फलोंका विचार करना.

२७ विशेषज्ञ (हरेक वस्तुओंका तफावत समझकर स्वात्माके गुणदोषको विचारना

२८ कृतज्ञ (किया कर्मकी पहेचान) किया हुवा उपकारको और अपकारको समझना

२९ लोकप्रिय (विनयादि गुणोंसे लोकप्रिय होना.

३० लज्जालु (लाजवाला) लाज और मर्यादामें रहनेवाला,

३१ दयालु (दयाभाव रखनेवाला)

३२ सुंदर आकृतिवान् (क्रुर आकृतिको त्यागकर शरीरका सुंदर आकार रखना)

३३ परोपकारी-(औरोंको उपकारी होना).

३४ अंतरंगारिजित् (काम, क्रोध, लोभ, मान, मद और हर्ष इन छ दुश्मनोंको जीतना.)

३५ वशीकृतेंद्रियग्राम-(इन्द्रियोंका समुहको-सर्व इन्द्रियोंको वशकरनेका अभ्यासकरना. बालजीवोंका पढनेमें सुगमहो इसलिये उपरोक्त पैंतिस (३५) बोल लिखें हैं,



॥ चोवीस तीर्थंकरना नाम लंछन वर्ण तथा मातापिताना नाम ॥

अ.	नाम	लंछन	वर्ण	पिता	माता
१	श्रीऋषभदेव	बळद	कांचन	नाभिराजा	मरुदेवी
२	श्रीअजितनाथ	हाथी	,,	जितशत्रु	विजया
३	श्रीसंभवनाथ	घोडो	,,	जितारी	सेना
४	श्रीअभिनंदनस्वामी	वांदरो	,,	संवर	सिद्धार्था
५	श्रीसुमतिनाथ	क्रौंचपक्षी	,,	मेघराय	मंगला
६	श्रीपद्मप्रभु	कमळ	रातो	धर	सुसीमा

७	श्रीसुपार्श्वनाथ	साथीओ	कांचन	प्रतिष्ठित	पृथ्वी
८	श्रीचंद्रप्रभ	चंद्र	उज्ज्वल	महसेनराजा	लक्ष्मणा
९	श्रीसुविधिनाथ	मगरमच्छ	,,	सुग्रीव	रामा
१०	श्रीशीतळनाथ	श्रीवच्छ	कांचन	द्रढरथ	नंदा
११	श्रीश्रेयांसनाथ	गेंडो	,,	विष्णु	विष्णु
१२	श्रीवासुपूज्यस्वामी	महिष	रातो	वसुपूज्य	जया
१३	श्रीविमलनाथ	वराह	कांचन	कृतवर्मा	श्यामा
१४	श्रीअनंतनाथ	सींचाणो	,,	सिंहसेन	सुयशा
१५	श्रीधर्मनाथ	वज्र	,,	भानु	सुव्रता
१६	श्रीशांतिनाथ	मृग	,,	विश्वसेन	अचिरादेवी

१७	श्रीकुंथुनाथ	छाग(बोकडो)	,,	सुर	सिरि
१८	श्रीअरनाथ	स्वस्तिक	,,	सुदर्शन	देवी
१९	श्रीमल्लिनाथ	कुंभ	लीलो	कुंभराय	प्रभावती
२०	श्रीमुनिसुव्रतस्वामी	काचबो	श्याम	सुमित्र	पद्मा
२१	श्रीनमिनाथ	कमळ	कांचन	विजय	वप्रा
२२	श्रीनेमनाथ	शंख	श्याम	समुद्रविजय	शिवादेवी
२३	श्रीपार्श्वनाथ	सर्प	लीलो	अश्वसेन	वामादेवी
२४	श्रीमहावीरस्वामी	सिंह	कांचन	सिद्धार्थराजा	त्रिशलादेवी

चैत्यवंदन १

अष्टापद श्रीरुषभदेव, सिद्धा सहु जाण;
चंपानगरी वासुपूज्य, पावाए वर्द्धमान, ॥१॥
नेमीश्वर बावीसमा, गिरनारे सिद्धा;
ए चारे जिन जुजुआ, शाश्वत सुख लीधा. ॥२॥
अवर वीस तीर्थंकरा ए, समेतशिखर गिरिराज;
भानुचन्द्र मुक्ति गया, सिद्धा आतमकाज. ॥३॥

चैत्यवंदन २

जय जय तुं जिनराज आज,
मळीयो मुज स्वामी:
अविनाशी अकलंकरूप
जग अंतरजामी. ॥१॥

रूपारूपी धर्मदेव,
आतम आरामी;
चिदानंद चेतन अचिंत्य,
शिवलीला पामी. ॥२॥
सिद्ध बुद्ध तुज वंदतां ए,
सकल सिद्धवर बुद्ध;
राम प्रभु ध्याने करी,
प्रगटे आतम रिद्ध. ॥३॥

चैत्यवंदन ३

श्रीवीर जिनेश्वर वंदीए,
शासनपति जिनराय;
विघ्न समुह दूरे टले,
जेना चरण पसाय. ॥१॥

ध्यान धरुं एक आपनुं,
अवर न मानुं आण;
भव भव भमता पामिओ,
चरण कमल जगभाण. ॥२॥

आनन आनन्दित सदाए,
सोवन वर्ण शरीर;
बहुंतेर वर्ष आयु प्रभु,
पाम्या भवोदधि तीर. ॥३॥

॥ अथ श्रीस्तवनो ॥

॥ श्रीशत्रुंजय स्तवन ॥

कंचनगिरि दरिसन आजमे पायो,
मुज आतम गुण उलसायो ॥कं०॥

तीरथनायक नाभिको नन्दन,
मारुदेवी माताको जायो ॥
युगला धर्म निवारक जिनपति,
पूरव नवाणु आयो ॥कं०॥१॥
काल अनन्ते इण गिरि उपर,
अनन्त मुनि समुदायो ॥
तप जप खप करी संजम आदरि,
मोक्षनगर पहुंचायो ॥कं०॥२॥
शासनपति श्रीवीर जिनेश्वर,
शाश्वतो तीरथ बतायो ॥
त्रिकरण सुध कर जे भवि सेवे,
दोहग दूर गमायो ॥कं०॥३॥
तीन भुवनमें ए तीरथ मोटो,
त्रिभुवन जन मन ध्यायो ॥

दश दिगमें गिरि एसो न दूजो,
तीरथराज सवायो ॥कं०॥४॥
पुन्यदशा अब मेरी जागी,
मिथ्या तिमिर मिटायो ॥
गिरिवर देखत आनन्द उपन्यो,
हर्षसूरींद्र गुण गायो ॥कं॥५॥

॥ अथ श्रीकेसरीयाजीनुं स्तवन ॥

केसरियाको दरिसन करणेकुं आयो, हांरे मन मेरो अति उलसायो ॥केसरी०॥१॥ (ए आंकणी) ॥ नाभिनरेसर वंश प्रकासक, माता मरुदेवी जायो ॥ वृषभ लंछन धर चरण कमलमें, मन मधुकर लपटायो ॥केसरी० ॥ २ ॥ क्षुधा परिषह सहके स्वामी, केवल

पदवी पायो ॥ हेत धरी माताने दीधो, दीनदयाल कहायो ॥ केसरी० ॥ ३ ॥ फूल माल फल देइ साहिब, उंबररोग गमायो ॥ त्रिकरण शुद्धकर पूजा करतां, लंकेसर सुख पायो ॥ केसरी० ॥४॥ कीरती मोटी सुणके आयो, मनमें हरख भरायो ॥ मोहनी मूरति नयणे निरखी, हृदय कमल विकसायो, ॥ केसरी० ॥५॥ कलियुगमें ए अनुपम तीरथ, सुरनर मुनिजन ध्यायो ॥ परचा पूरे चिंता चूरे, नाम सदा सुखदायो ॥ केसरी० ॥ ६ ॥ उगणीससें चार फागुण मासे, सुदी बारस गुणगायो ॥ संघ प्रतापे प्रभुकुं भेटे; दिन दिन हर्ष सवायो ॥ केसरी० ॥ ७ ॥

॥ अथ श्रीऋषभजिन स्तवन ॥

(राग-भैरव)

उठत प्रभात नाम, जिनजीको गाइयें ॥ नाभिजिके नन्दके चरण चित्त लाइए ॥उठत० ॥ १ ॥ आनंदके कंद जाकुं पूजत सुरींदवृंद, एसो जिनराज छोड ओरकुं न ध्याइयें ॥ उठत ॥ २ ॥ जनम अयोध्या ठाम, माता मरुदेवा नाम ॥ लंछन वृषभ जाके चरण सोहाइयें ॥ उठत० ॥ ३ ॥ पांचसे धनुष मान, दीपत कनकवान् ॥ चोराशी पूरवलाख, आयु स्थिति पाईयें ॥ उठत० ॥ ४ ॥ आदिनाथ आदिदेव, सुर नर सारे सेव ॥ देवनको देवप्रभु, शिव सुख दाइयें ॥ उठत० ॥५॥ प्रभु के पादारविन्द, पूजत हरखचन्द्र ॥ मेटो भव दुःखदंद, सुख सम्पद बढाइये ॥ उठत० ॥ ६ ॥

॥ श्री जिनेश्वरनुं स्तवन ॥

(हिरजाकी चाल)

अरज हमारी सुन लिजीए, जिनमतके राजा ॥ अरज० ॥ दुश्मन क्रोधादिक लगारे, पंच प्रमाद ठगेरा, तेर काठिया केड न मूके ॥ विषयादिक रहे घेरारे ॥ जिनमतके राजा० ॥ १ ॥ आठ करम मोहे नाच नचावे, जोनी लाख चोरासी ॥ निज गुण विण कछु काम न सरियो, तुमसे कहुं अविनाशी रे ॥ अरज० ॥२॥ धरम धरम करतो जग ढुंढे, धरम मरम नही जाने ॥ साचे धरम विना कहो कैसे, तत्त्व वात पहिचाने रे ॥ अरज० ॥ ३॥ भव वनमांहे चेतन भमतां, समकितकुं नहि पायो ॥ गिलगिचीया जिम गुडता गुडता, अबके नर

भव आयोरे ॥ अरज० ॥ ४ ॥ समरथ साहि
जान प्रभुजी, तुम दरसन मन भायो ॥ सुगति
नगरकी डीगरी दीजे, अबीरचंद गुण गायें
रे ॥ अरज० ॥ ५ ॥

॥ श्री महावीरस्वामीनुं स्तवन ॥

(जन्म कल्याणक)

आज महोच्छव रंग रलीरी,
जायो सुत त्रीसलादे राणी ॥
कामित पूरण काम कलीरी,
आज महोच्छव रंग रलीरी ॥१॥
सजी सिणगार सकल सुर वनिता,
आपन आपन मेल चलिरी ॥
आवत सिद्धारथ के आंगण,
पूरत मोतीयन चोक मलिरी ॥आ०॥२॥

इन्द्र हुकम कर धनद पठायो,
सब वसुधा धन धान्य भरिरी ॥
कनक रत्नमणि पंचवरण के,
कुसुम विखेरत गलीयगलीरी ॥आ०॥ ३॥
इन्द्राणी मिल मंगल गावत,
नाचत नाटक सुर कुमरीरी ॥
बाजत गहन शब्दकर दुन्दुभि,
विणा वेणुं मृदंग भलीरी ॥आ०॥४॥
जय जयकार भयो तिहुं जगमें,
व्याधि व्यथा सबदूर टलीरी ॥
हरखचन्द्र जन्में प्रभु मेरे,
मनकी आशा सफल फलीरी ॥आ०॥५॥

卐

श्री जिनप्रतिमा स्थापन स्तुति.

(मंगल आठ करी जस आगल, ए देशीमां)

जिनवर प्रतिमा छे सुखदाइ,
भवियण भावे भेटोजी;
आपणो समकित निरमल कीजे,
पाप पडल सब मेटोजी. १

दुर्लभ ए नरभव तुम पायो,
कोइक पुण्य पसायेजी;
शुद्ध देवगुरु धर्म आराधो,
सुख संपत्ति बहु थायेजी. २

क्रोध कषाय कपट मद निन्दा,
माया लोभ न करीयेजी;
जिनवर वाणी नित प्रति सुणीये,
ममता संग परिहरीएजी. ३

आगम मांहे ज्ञानीए भाख्यो,
जिन पडिमा जिनसरखीजी;
तन मन वचन करीने पूजो,
अबीरकहत मन हरखीजी. ४





सामायिक, चैत्यवंदन और गुरुवंदनमें आते हुए सूत्रोंके भावार्थ.

सामायिक विधिमें आते हुए सूत्रोंके भावार्थ.

१ पंचपरमेष्ठि—नमस्कार मंत्र—महा-मंगल सूत्र

इस सूत्रमें अरिहंत, सिद्ध, आचार्य,

उपाध्याय तथा साधु इन पञ्च परमेष्ठिको नमस्कार करनेमें आया है। इससे सब पाप और विघ्न दूर हो जाते हैं और यह नमस्कार मंत्र सर्व मंगलोमें प्रथम मंगलरूप है।

२ पंचिंदिअ–गुरुस्थापना सूत्र ॥

इस सूत्रमें श्री आचार्य महाराजके छत्तीस गुणोंका वर्णन है। और कोइ भी क्रिया करते समय स्थापनाचार्यकी स्थापना की जाती है, उस समय यह सूत्र बोला जाता है।

३ खमासमण पञ्चाङ्ग प्रणिपात सूत्र ॥

हे क्षभाश्रमण! मैं मेरी शरीर की शक्ति के अनुसार और अन्न पाप कार्यों का निषेध (त्याग) करके, (आप के चरण कमल को)

वंदन करने को इच्छता हुँ। यह सूत्र जिनेश्वर प्रभु और गुरूजी को वंदन करते समय बोला जाता हैं।

४ इरियावहियं-प्रतिक्रमण-सूत्र ॥

इस सूत्रमें चलते, फिरते, जाते, आते, अपनेसे जीवों की हिंसा हो जाने से जो पाप लगा हो, वह दूर करने की हकीकत है।

५ तस्स-उत्तरी-करणेणं सूत्र।

इरियावहियं सूत्रसे दूर करनेसे भो बचे हुए पापोंको नाश करनेके लिये काउस्सग्ग करनेके पांच हेतु इस सूत्रमें बताने में आये हैं।

६ अन्नत्थ-ऊससिएणं-सूत्र।

इस सूत्रमें-काउसग्ग करते समय स्वाभाविक ही हो जाने वाली कितनी ही शारीरिक

छोटी बडी क्रियाओं से काउसग्ग भंग न हो जाय इस लिये सोलह आगार छूट लेने का वर्णन है। साथ में ही काउस्सग्ग करने की रीत, दृढता और पूर्ण करने की मर्यादा दिखाई गई हैं।

७ लोगस्स-नामस्तव सूत्र।

इस सूत्रमें–आत्म–कल्याणमें आगे बढने के लिये चौबीस तीर्थंकर भगवंतों की नाम पूर्वक हार्दिक स्तुति की गई हैं. जिससे सम्यग्दर्शन–ज्ञान चारित्ररूप मोक्ष की प्राप्तिद्वारा मोक्ष देनेकी प्रार्थना की गई है।

८ श्री करेमि भंते–सामायिक महादंडक सूत्र

इस सूत्रमें-सामायिक लेनेकी महाप्रतिज्ञा

है और मन वचन कायासे कुछ भी पाप न कराना और सामायिकके नियम तक अडग धैर्यसे समभावमें रहने का दिखलाया गया है।

७–सामायिय–वय–जुत्तो–सूत्र

इस सूत्रमें–सामायिक व्रत की महिमा समझाने में और सामायिक करने वाला जितनी भी वार सामायिक करें उतनी देर तक श्रावक होते हुए भी मुनि तुल्य (समान) गिना जा सकता है इस लिये " पूर्ण चारित्र धर्म की आराधना के लिए बार बार सामायिक करना चाहिए "। इस भावना को टिका रखने के लिये सामायिक पारते समय यह सूत्र बोला जाता है।

॥ पञ्चाङ्गप्रणिपात ॥

दो हाथ, दो घुटने—और पांचवा मस्तक इनको जमीनसे लगाकर जो वंदना कि जाती है, उसे पञ्चाङ्गप्रणिपात कहते है. ।

। चैत्यवंदन विधिमें आते हुए सूत्रोके भावार्थ ।

प्रथम तीन खमासमण देकर, पीछे इच्छाकारेण संदिसह भगवन् चैत्यवंदन करुं ? इच्छं एसा कहकर चैत्यवंदन कहे. पीछे जंकिंचि० से अरिहंत चेइआणं तकके सूत्रोका चैत्यवंदन करते समय उपयोग किया जाता है. । इन सूत्रका भावार्थ निम्न लिखित हैं. ।

१ जंकिंचि नाम तित्थं सूत्र.

इस सूत्रमें जो कोइ भी नाम मात्रसे प्रसिद्ध जैन तीर्थ हो उसको, तथा तीन लोक में रही हुई सर्व जिन प्रतिमाओको नमस्कार करनेमें आया है।

२ नमुत्थुणं (शक्रस्तव) सूत्र

शक्र इन्द्र महाराज भगवानकी स्तुति यह सूत्र बोल कर करते है। उसमें अरिहन्त भगवानके असाधारण सर्व श्रेष्ठ गुणोंका वर्णन है।

३ जावंति चेइआइं सूत्र।

इस सूत्रमें तीन लोकमे रही हुई श्रीजिन प्रतिमाओंको नमस्कार किया गया है।

४ जावंत केविसाहू सूत्र ।

इस सूत्रमें भरत, ऐरवत, और महाविदेह क्षेत्रमें रहे हूए सर्व साधु साध्वीओंको नमस्कार करनेमें आया है. ।

५ अथ उवसग्गहरं स्तवन

श्री पार्श्वनाथ प्रभुके गुणोंकी स्तुतिरूप यह सूत्र श्री भद्रबाहु स्वामी का रचा हुवा है। यह सब विघ्नोको नाश करनेवाला हैं ।

(यह उवसग्गहरं कहनेके बाद और भी कोइ स्तवन बोलना हो तो बोल सकते है. ।

६ 'जयवीयराय' (महाप्रार्थना) सूत्र

इस सूत्रमें प्रभुके पास कितनी ही मन, वचन, कायाकी एकाग्रतापूर्वक उत्तम प्रार्थनाए करनेमें आई है ।

७ अरिहंत चेइआणं (चैत्य स्तव) सूत्र

इस सूत्रमें श्री जिनप्रतिमाओंके आराधनार्थे काउसग्ग करनेके निमित्त और उस समय रखनेकी भावनाओंका वर्णन है. ।

१ गुरू महाराजको वन्दन करते समय जिन सूत्रोका उपयोग किया जाता है। इनका भावार्थ विधि सहित निम्न लिखित है ।

मंदिरमें दर्शन करने के बाद यदि पञ्च महाव्रतोके धारण करनेवाले और पांच समिति तिन गुप्ति, दशविध यधिधर्मके पालन करनेवाले एसे निर्ग्रन्थ निस्पृह गुरुका योग होवो

उनके चरणकमलोंमें वंदना करने के लिये जाना चाहिये.। और पूर्ण श्रद्धापूर्वक विधिसे उनको वंदना करना चाहिये.। जिसकी विधि नीचे लिखे अनुसार है.।

प्रथम दो खमासमण, खमासमण सूत्रसे देवे। बादमे खडे होकरके इच्छकार भगवान् सूत्रसे गुरुको सुख साता पूछे, बादमें एक खमासमण देकरके 'अब्भुट्ठिओ" खमावें, पीछे यथाशक्ति "पच्चक्खाण" करके समासमण देवें.।

श्री जिनेन्द्र प्रभुजीके सन्मुख बोलनेकी स्तुति, श्लोक, प्रार्थना वगैरहका संग्रह

॥ मंगलाचरण ॥

[नमोनमो मंगलमय महावीर]

(राग–आशानी लय.)

नमो नमो मंगलमय महावीर (२)
शासननायक धीर, नमो नमो० ए टेक० ।
गौतम गणधर, स्थूलिभद्रादि,
मुनिमंडल महागंभीर ॥ नमो नमो ॥१॥
चंडकोशी ज्यारे चरणे डसीयो,
तोये क्रोध न अंतर वसीयो;
राखी प्रभुए केवी धीर ॥ नमो नमो ॥२॥

कानमां खीला ज्यारे ठोकाणा,
अनेक परीषहो सुख करी मान्या;
तोये राख्युं मन स्थिर ॥ नमो नमो ॥३॥
चंदनबाला श्राविका साची,
अडद् बाकुला प्रभु प्रतिलाभी;
जेनी तूटी गई झंजीर ॥ नमो नमो ॥४॥
नर हत्यारो अर्जुन माली,
जेनां कर्मों दीधां प्रजाली,
उतार्यो भवजल तीर ॥ नमो नमो ॥५॥
अङ्गुठे अमृत लब्धि विराजे,
त्रण भुवन जेनी घोषणा गाजे;
वाणी मीठी दूध खीर ॥ नमो नमो० ॥६॥
शासन देवी सहायज करजो,

शारदा देवी अंतर वसजो;
(भोगी) नमावत शीर ॥ नमो नमो ॥७॥

॥ जिनेन्द्र प्रतिमाजीके सन्मुख बोलनेकी स्तुति ॥

अर्हन्तो भगवंतइन्द्रमहिताः
सिद्धाश्च सिद्धिस्थिताः ।
आचार्या जिनशासनोन्नतिकराः
पूज्या उपाध्यायकाः ॥
श्री सिद्धान्तसुपाठका
मुनिवरा रत्नत्रयाराधकाः ।
पंचैते परमेष्ठिनः प्रतिदिनं,
कुर्वन्तु नो मङ्गलम् ॥ १ ॥
तुभ्यं नमस्त्रिभुवनार्तिहराय नाथ ।
तुभ्यं नमः क्षितितलामलभूषणाय ॥

तुभ्यं नमस्त्रिजगतः परमेश्वराय ।
तुभ्यं नमो जिनभवोदधिशोषणाय ॥१॥
जगत्त्रयाधार ! कृपावतार !
दुर्वारसंसारविकार वैद्य ! ॥
श्री वीतराग ! त्वयि मुग्धभावात्,
विज्ञप्रभो ! विज्ञपयामि किञ्चित् ॥१॥
दर्शनं देवदेवस्य, दर्शनं पापनाशनम् ।
दर्शनं स्वर्गसोपानं, दर्शनं मोक्षसाधनम् ॥१॥
सरसशान्तसुधारससागरं,
शुचितरं गुणरत्नमहाकरम् ॥
भविकपंकजबोधदिवाकरं,
प्रतिदिनं प्रणमामि जिनेश्वरम् ॥१॥
पाताळे यानि बिम्बानि,
यानि बिम्बानि भूतळे ॥

स्वर्गेऽपि यानि बिंबानि,
तानि वन्दे निरंतरं ॥ १ ॥
ॐकार बिन्दुसंयुक्तं,
नित्यं ध्यायन्ति योगिनः ।
कामदं मोक्षदं चैव,
ॐकाराय नमो नमः ॥ १ ॥
मंगलं भगवान् वीरो,
मंगलं गौतमप्रभुः ।
मंगलं स्थूलभद्राद्या,
जैनधर्मोऽस्तु मङ्गलम् ॥ १ ॥
पूर्णानन्दमयं महोदयमयं
कैवल्यचिद्दिङ्मयं,
रूपातीतमयं स्वरूपरमणं
स्वाभाविकीश्रीमयम् ।

ज्ञानोद्योतमयं कृपारसमयं
स्याद्वादविद्यालयम्
श्रीसिद्धाचलतीर्थराजमनिशं
वन्देऽहमादीश्वरम् ॥ १ ॥

अन्यथा शरणं नास्ति, त्वमेव शरणं मम ।
तस्मात् कारुण्यभावेन, रक्ष रक्ष जिनेश्वर ॥१॥

× × ×

प्रभुदर्शन सुखसंपदा, प्रभुदर्शन नवनिध ।
प्रभुदर्शनसे पाईए, सकल पदारथ सिद्ध ॥१॥
भावे भाईये भावना, भावे दीजे दान ।
भावे प्रभुजीको पूजिये, भावे केवल ज्ञान ॥२॥
जीवडा जिनवर पूजिये, पूजाना फल होय ।
राज नमे प्रजा नमे, आण न लोपे कोय ॥३॥

फूलो केरा बागमां, बेठा श्री जिनराज ।
जेम तारामां चन्द्रमा, तेम शोभे महाराज ॥४॥
प्रभुनामनी औषधि, खरा भावथी खाय ।
रोगशोक आये नहीं, सबी संकट दूर थाय ॥५॥
वाडी चंपो मोरियो, सोवन पांखडिये ।
पास जिनेश्वर पूजीये, पांचे आंगलिये ॥६॥
त्रिभुवन नायक तुं धणी, महीमोटो महाराज ।
मोटे पुण्ये पामियो, तुज दर्शन हुं आज ॥७॥
आज मनोरथ सब फले, प्रगटे पुण्य कल्लोल ।
पापकरम दूरे टल्या, नाठा दुःख दंदोल ॥८॥
अरिहन्त अरिहन्त समरतो, लाध्यो मोक्षनो धाम।
जे नर अरिहन्त समरसे, तेनां सरशे काम ॥९॥
सूतां, बेसतां उठतां, जे समरे अरिहन्त ।
दुखीयाना दुःख भांगशे, सरशे काज महंत ॥१०॥

सकल करमवारी, मोक्षमार्गाधिकारी ।
त्रिभुवनउपकारी, केवलज्ञानधारी ॥
भविजन नित सेवो, देव ए भक्तिभावे ।
इहज जिन भजंता, सर्व संपत्ति आवे ॥११॥
जिनवर पदसेवा, सर्व संपत्तिदायी ।
निशदिन सुखदायी, कल्पवल्लीसहायी ।
नमि विनमि लहीजे, सर्व विद्या बडाई ।
ऋषभ जिनह सेवा, साधतां तेह पाई ॥११॥

॥ सोलह सतीयांकी स्तुति ॥

ब्राह्मी चंदनबालिका भगवती
राजमती द्रौपदी,
कौशल्या च मृगावती च सुलसा
सीता सुभद्रा शिवा ।

कुन्ती शीलवती नलस्य दायिता
चूला प्रभावत्यपि
पद्मावत्यपि सुन्दरी दिनमुखे
कुर्वन्तु नो मंगलम् ॥१॥

॥ प्रातः कालकी प्रार्थना ॥

हे प्रभो ! आनन्द दाता, ज्ञान हमको दीजिये ।
शिघ्र सारे दुर्गुणोंको, दूर हमसें कीजिये ॥
लीजिये हमको शरणमें, हम सदाचारी बनें ।
ब्रह्मचारी धर्मरक्षक, वीर व्रतधारी बनें ॥१॥
प्रेमसे हम गुरूजनोंकी, नित्य ही सेवा करें ।
सत्य बोले झूंठ त्यागे, मेल आपसमें करें ॥
निन्दा किसीकी हम किसीसे, भूलकर भी न करें
धैर्य बुद्धि मन लगाकर, ईश गुण गाया करें ॥२॥

“ श्री शांति जिनकी आरति ”

जय जय आरति शांति तुमारी,
तोरा चरण कमलकी में जाउं बलीहारि
॥ जय० ॥ १ ॥
विश्वसेन अचिराजीके नन्दा,
शान्तिनाथ मुख पुनम चन्दा ॥जय०॥२॥
चालीश धनुष्य सोवनमयकाया,
मृगलंछन प्रभुचरण चरण सुहाया ॥जय॥३॥
चक्रवर्त्ती प्रभु पांचमा सोहे,
सोलमा जिनवर जग सहु मोहे ॥जय॥४॥
मंगल आरति ओरहिं कीजे,
जनम जनमनो लाहो लीजे ॥ जय० ॥५॥
करजोडी सेवक गुण गाये,
सो नरनारी अमर पद पावे ॥ जय० ॥६॥

॥ मंगल दीवो ॥

दीवो रे दीवो प्रभु मंगलिक दीवो,
आरति उतारण बहु चिरंजीवो ॥दी०॥१॥
सोहामणुं घेर पर्व दीवाळी,
अंबर खेले अमरा बाली ॥दी०॥२॥
दीपाल भणे एणे कुल अजुवाली ।
भावे भक्ते विघन निवारी ॥दी०॥३॥
दीपाल भणे एण कलिकाले,
आरति उतारी राजा कुमारपाले ॥दी०॥४॥
अम घेर मंगलिक तुम घेर मंगलिक ।
मंगलिक चतुर्विध संघने होजो ॥दी०॥५॥

सातवारनी करणी

महावीर आव्यो तुंज द्वार जयजयकारीरे,
मोरी अर्ज धरी उर माय हेत वधारीरे ॥१॥

आदित वारे मुख लागे सारुं रे,
कांइ त्रीसला केरा नंद नाम छे प्यारुंरे, ॥२॥
सोमवारे धरी प्रित प्रेमे ।
आसातना थाय लगीर तेहथी ध्रुजीरे ॥३॥
मंगल आंगी अनोपम शोभे सारीरे,
प्रभु दरिसन केरी आश, आवे नरनारीरे ॥४॥
बुधे बहु बळवान जिनजी कृपालुरे,
हे त्रिभुवन नायक देव हुं संभाळुंरे, ॥५॥
गुरुवारे शुध सेव देजो अमनेरे,
भवसागरमांथी तार कहींए तमनेरे ॥६॥
शुक्र छे छट्ठो दिन शणगार झाझारे,
प्रभु कंठे शोभे वळीमाळ हीरा छे साचारे ॥७
शनिवारे शुभ ध्यान धरिये तुमारुंरे,
वळी मंत्र थकी नवकार चित्तमां समरोयेरे ८

मुनि जगत्चन्द्र विनवे हेतेरे,
प्रभुसेवकनें पार उतार तुजने भेटे रे ॥९॥

॥ अथ श्री वीरजिन कल्याणक सज्झाय ॥

(आदि अजित श्री शांतिनो, दिठो० ए देशी)

तिरथ नायक वंदिये, जिनवर श्री वर्धमान।
तेहतणा गुण गाइए, वहियें आण प्रमाण ॥
कल्याणक दिन आवियो ॥१॥
गहि गहे भवियण जाण,वीर शिवपद पामीयो।
गोयम केवल नाण, कल्याणक दिन० ॥ २ ॥
भोळा दीवाळी भणे, पडिया लोक प्रवाह ।
समकित तेहनुं किम रहे, मिथ्यापर्व उच्छाह।
॥ क० ॥ ३ ॥

केइ कहे कोंडेसरी, मूढ न जाणे भेद ।
वळी विशेषे आदरे, कुगुरू कुधर्म कुदेव ।
॥ क० ॥ ४ ॥

दुर्लभ माणस भव लही, दुर्लभ श्रावक कुळजाण ।
लौकिक पर्वे गर्विया, कांई करो समकित हाण ॥
॥ क० ॥ ५ ॥

चाचर चौपट चोहटे, जुवटुं मांडे रमत ॥
चतुर कहावे ते वळी, चउगति मांहि भमंत ॥
॥ क० ॥ ६ ॥

लींपण मंडण घरतणा, आरंभे षट् काय ॥
उंचे नीचे दीवडे, जिनधर्म हेला थाय ॥
॥ क० ॥ ७ ॥

सेव सुंवाली लाडवा, घर घरे करे अनेक ॥
सपरव दिन जाणी करी, जुवो एह विवेक ॥
॥ क० ॥ ८ ॥

लोकोत्तर मिथ्यामते, केइ जिन भवणनिवेस ॥
सोल महर दिवा करे, कुगुरु तणो उपदेश ॥
॥ क० ॥ ९ ॥

घर घर कल्पे कोडीया, मह समे कूटे मूप ॥
चउले नीले सालणे, एहस्युं परव सरूप ॥
॥ क० ॥ १० ॥

थाळ भरी भरी मोकले, जिनवर भोजन काज ॥
जिनवर जाण कहावता, इम नहिं जिनमत राज ।
॥ क० ॥ ११ ॥

पूजावे ते गुरु भणी, यंत्र मंत्र बहु जाप ॥
करी भोळानें भोळवे, सहसे ते संताप ॥
॥ क० ॥ १२ ॥

वनस्पति मन नहु गणे, साधारण प्रत्येक ॥
छेदी करे ते मेरीया, श्रावक नाम अनेक ॥
॥ क० ॥ १३ ॥

धनतेरस तेरसी पड्या, नाणे जयणा लगार ॥
वस्त्र धोवे कारण भणी, व्रत बाळी करे अंगार ॥
॥ क० ॥ १४ ॥

जुहार भटारे घसमसे, वहुला पान तंबोळ ॥
श्रावक कुळ मवाहनो, ए कह्यो हलबोल ॥
॥ क० ॥ १५ ॥

धन धन रन दिण आवियो, जे श्रावक सुविचार ।
सोल पहोर पोसा करी, टाळो तसु अतिचार ।
॥ क० ॥ १६ ॥

आगम दीप अजुवाळीए, गणीए मंत्र नवकार ॥
ब्रह्मचर्य जळे नाइए, जुहार दर्शन गुरु सार ॥
॥ क० ॥ १७ ॥

जिनवरनी भावे भावना, मन आणी जिन आण ॥
गुण गावे जिनवरतणा, तेहनो जन्म प्रमाण ॥
॥ क० ॥ १८ ॥

मिथ्यामत जुवारकी, समकित रमे सुजाण ॥
नवतत्त्व नवरस रसवती, शील ते करे मंडाण ॥
॥ क० ॥ १९ ॥

निर्मल मतिवर कापडा, सत्य वचन तंबोल ॥
सुखसागर झीले सदा, करता मन कल्लोल ॥
॥ क० ॥ २० ॥

हिवडां सासननो धणी, वीर जिणेसर देव ॥
गोयम गणधर तेहना, सुरनर सारे सेव ॥
॥ क० ॥ २१ ॥

नाम मात्र तिणने समरतां, अहनिश होइ आणंद ॥
साधुरत्न शिष्य विनवे, सूरि श्री पार्श्वचंद्र ॥
कल्याणक दिन आवियो ॥ २२ ॥ इति ॥

॥ श्री सद्गुरुनी स्तुति ॥

शांति जिणंद प्रणाम करी,
अहनिश जिन चित्त प्रमोद धरी ।
पाप पडल सवि दूर हरी,
सूरिपार्श्वचन्द्र थव्रशुं हरख भरी ॥१॥

सूरिशिरोमणी जग राजे,
जसु सद्गुरु साहुरयण छाजे ।
वडतपगच्छ नायक गाजे,
सवि अरियण केरादल भाजे ॥ २ ॥

शास्त्र सकल लघुपणे जाणे,
वळि देव प्रभावे मेह आणे ।
रायराणा जेहने प्रणमे,
पूज्य आगल हीयडे मदनाणे ॥ ३ ॥

शीख लही सद्गुरु पासें,
ग्रही संजम समता मनवासे ।
उत्तम लक्षण जसु तनु भासे,
नर नारी गुण गावे रासे ॥ ४ ॥
गुज्झर मरु मालव देशें,
प्रतिबोध्या भवियण उपदेशें ।
कुमति मिथ्यात्व न रहे लेशें,
जिन मारग सुधो सम वेसें ॥ ५ ॥
नयर जोधाणे अनुक्रमे आवे,
लहि अणसण सुरनी गति पावे ।
संघ मिलो पगलां ठावे,
जसु जात्रा दिशोदिशथी आवे ॥६॥
पूज्य थूभ भली महिमा परसे,
सेवक घर कमला केलि करे ॥

परघल पुण्य भंडार भरे,
जसु कीरति चिहुंदिश काज सरे ॥७॥
आतुर अरति रोग साग समे,
भय सात सहि ततकाल गमे।
अडवी पड्यां जे पूज्यजी नमे,
ते कुशल कल्याणे पंथ क्रमे ॥ ८ ॥
जे गुरु चरणकमल ध्यावे,
सुत वंछे ते नर सुत पावे ।
अष्ट महासिद्धि घर लावे,
दुःख सायर उत्तरि तट जावे ॥ ९ ॥
वयर विरोध सन्ताप टले,
गुरु समर्यां वेरीना मान गळे ॥
नवि भूत न प्रेत पिशाच छले,
ग्रह गोचर भूंडा जाय विले ॥ १० ॥

नयर जोधाणे शोभा सुणी,
वलि नागोर बीकानेर पूजा घणी।
सानिध करो पूज्यजी संघभणी,
मुनि मेघराज भणे सुख लाभ गणी॥१०

॥ श्री भ्रातृचन्द्रसूरीश्वरस्तुति ॥

(हरिगीत—छंद)

श्री पार्श्वचन्द्रसूरीन्द नागपुरीन्द तपगण नभमणी,
तसपट परंपर गणधुरंधर हेमचन्द्रसूरिगुणी।
निर्ग्रंथ गुरु तस पाटराजे आज गावे मुनिवरा,
भवि भक्तिभावे नमो निशदिन भ्रातृचन्द्र-
सूरीश्वरा॥ १॥
छे शांत दांत महन्त किरियापात्र समता सागरु,
पंडितप्रवर विद्वान् बुद्धिनिधान विद्याआगरु।
अघ ओघवारक महाप्रभावक धर्मधोरी धुरंधरा,

भवि भक्तिभावे नमो निशदिन भ्रातृचन्द्र-
सूरीश्वरा ॥ २ ॥

छे भव्य आकृति धर्ममूर्ति प्रभुतुल्य मनोवृत्ति,
तप तेज दीपे कदि न छीपे भाग्यनी चढती रती।
वली शरद शशिसम सौम्यकांति
शांतिवान शुभंकरा,
भवि भक्तिभावे नमो निशदिन भ्रातृचन्द्र-
सूरीश्वरा ॥ ३ ॥

गुरु गच्छनायक ज्ञानदायक संघमां लायक मुदा,
गत राग रोष न दोष जरिए
तोष सुख दुःखमां सदा।
छत्रीस गुणगण युक्तसूरीश्वर
चरणगुणथी अलंकर्या,
भवि भक्तिभावे नमो निशदिन भ्रातृचन्द्र-
सूरीश्वरा ॥ ४ ॥

जिन भाण अस्त थतां सूरीश्वर
ज्ञान दीप प्रकाशता,
मिथ्यांधकार विकार टाळी
भविकजन प्रतिबोधता ।
शुभच्छंद सांकळचंद कहे
पावन करी भारत धरा,
भवि भक्ति भावे नमो निशदिन भ्रातृचन्द्र-
सूरीश्वरा ॥ ९ ॥

॥ श्री सद्गुरु–स्तुतिः ॥

(मालिनी–छंद)

उदयशिखरिचन्द्राः सद्वचोऽभोधिचन्द्राः,
सुकृतकुमुदचन्द्रा ध्वांतविध्वंसचन्द्राः ।
कुमतनलिनचन्द्राः कीर्तिविख्यातचन्द्राः,
प्रमदजननचन्द्राः श्रेयसेपार्श्वचन्द्राः ।
श्रेयसे भ्रातृचन्द्राः ॥ १ ॥

॥ वन्दे श्रीवीरम् ॥

॥ मूर्तिपूजाविचार[1] ॥

आत्मा निमित्तवासी है। उनके उन्नत और अवनत होनेमें निमित्त कारण ही की प्रधानता है। जिस प्रकार बुरे निमित्तोंसे आत्माकी अवनति होती है उसी प्रकार अच्छे निमित्तोंसे आत्माकी उन्नति होना स्वाभाविक ही है। इसलिये प्रत्येक प्राणीका यह कर्त्तव्य है कि यदि वह अपनी आत्मोन्नति करना चाहे तो अच्छे निमित्तों में रहना चाहिये। प्रत्येक धर्ममें ईश्वरकी उपासना

---

१ उद्धृत—जिनराज भक्ति-आदर्श.

(दर्शन, वंदन और पूजन)को आत्माके उन्नत होनेमें सबसे उत्तम निमित्त माना गया है। जैन धर्ममें भी अपने उपकारी और रागद्वेषसे रहित जिनेश्वर देवकी भक्तिको आत्मोन्नतिमें प्रथम साधन बतलाया है। वह भक्ति, उनके नाम स्मरण, गुणोत्कीर्तन, वंदन, पूजन, आज्ञा पालन आदिसे की जा सकती है।

प्राकृतिक नियमके अनुसार प्राणियोंका मूर्ति (प्रतिबिम्ब) की ओर अधिक झुकाव देखा जाता है। मूल वस्तुको पहिचानने और स्मरण करने में मूर्ति या चित्रकी नितान्त आवश्यकता रहती है। स्थापनाको माने बिना किसीका भी व्यवहार नहीं चल सकता।

इससे अति प्राचीन कालसे भारत वर्षकी जनता मूर्तिपूजाको मानती आई है, किन्तु जब भारतमें मुसलमानोंका साम्राज्य हुआ तो उनके बर्तावका भारतवर्षकी जनता पर बहुत प्रभाव पड़ा। मुसलमानो द्वारा बहुतसे प्राचीन मन्दिरोंके विध्वंस किये जाने परभी कुछ अवशेष मन्दिर व भूमिअन्तर्गत प्राप्त शिलालेख और प्राचीन धर्मशास्त्रों द्वारा मूर्तिपूजाकी प्राचीनता ऐतिहासिक प्रमाणों से सिद्ध हैं।

मूर्त्तिपूजाका उद्देश्य

जिनेश्वरकी मूर्ति जिनेश्वर समान लाभ-दायक है। जो प्रभु उपासना का उद्देश्य है

वही मूर्तिपूजा का उद्देश है। जैन सिद्धान्तों का कथन है कि प्रत्येक आत्मा सत्ता या निश्चयनयके अनुसार परमात्म स्वरूप है। संसारी आत्माकी यह परिस्थिति कर्मों के वश है और आत्मा परपुद्गल विषयमें आसक्त होकर कर्मबन्धन करता है। आत्माकी यह सकर्म सांसारिक अवस्था है। परमात्मा और आत्मामें यदि अन्तर है तो यही कि संसारी आत्मा कर्म साहत है, परमात्मा कर्म रहित शुद्ध स्वरूप है। इस लिये आत्माकी परम विशुद्ध अवस्थाही का नाम परमात्मा है। उन परमात्माकी सेवा-भक्तिका उद्देश्य यह नहीं हैं कि उनसे कोई सांसारिक सुखोंको मांगना लेकिन उनके दर्शन-का उद्देश तो

यह है कि उनके गुणोंको स्मरण करना, इस लिये आत्माके शुद्ध परमात्म स्वरूप का ध्यान करना या याद करके मै परमात्म स्वरूप होते हुए भी ऐसी परिस्थिति में क्यों हूँ। अपनी आत्मोन्नतिके मार्गको विचारना प्रभु दर्शन का मुख्य उद्देश्य है। उनकी भक्तिका उद्देश्य यह भी है कि उनके गुणानुरागी हो कर अपने जीवनमे से दुर्गुणों का नाशकर उनके गुणोंको प्राप्त करना। अतः अपनी आत्माको परमात्म स्वरूप बनाने के लिये मूर्तिपूजा पुष्ट आलंबन या कारण है। आत्मासे परमात्म रूप बननेमें उपादान कारण तो आत्मा ही है यह कभी भी न भूलना चाहिये, क्योंकि यदि अपन पाप वासनाओमें लिप्त

रहेंगे तो केवल दर्शन वंदन मात्रसे प्रभु तार नहीं सकते है। परन्तु अत्यंत संसारिक मोहमें फसे हुए प्राणियोंको प्रभु प्रतिमा एक उत्तम मार्गदर्शक हैं। यह बात हम कभी भी न भूलें।

दूसरा उद्देश्य यह है कि उपकारी के उपकार को मानना। जिनेश्वरदेवने आत्मा आदि द्रव्यों का यथार्थ स्वरूप बतलाकर आत्मोन्नति (धर्म) के मार्गका निःस्वार्थ उपदेश देकर अपने पर महान उपकार किया है. इसलिये उपकारको स्मरणकर उनकी भक्ति करना योग्य है।

मूर्ति पूजा व दर्शनसे लाभ.

१. प्रभुकी मूर्तिके दर्शन और पूजनादिसें पापोंका क्षय और पुण्यकी वृद्धि होती है। तथा मोक्षमार्ग की प्राप्ति होती है।

२. जिन-प्रतिमाके दर्शन व पूजनसे अच्छे भावोंकी जागृति होती है इससे "भाव विशुद्धि" नामक लाभ होता है।

३. प्रभु के दर्शन व पूजनसे श्रद्धा स्थिर रहती है। कई स्थानोमें यह भी देखा जाता है कि जहाँ मुनि विहार आदि न होने पर भी प्रभु-दर्शन पूजन करने के कारण जैनधर्ममें दृढता रहती है कि पूर्वपरम्परासे हमारे पूर्वज इस कार्यको करते आये हैं इसी

से हम जैनी है यह जानते हैं। जिससे उनका सुधार एवं उद्धार भी होता है, और वे धर्मसे च्युत नहीं होते।

(४) इतिहासमें भी मूर्ति और मन्दिर के शिलालेखों द्वारा जो लाभ हुआ है वह प्रत्यक्ष ही है।

(५) शिल्प कलाको इसमें बहुत पोषण मिला है और मिलता है।

(६) द्रव्यको शुभ मार्गमें लगानेका यह प्रशस्त मार्ग है इत्यादि अनेक लाभ है।

इसलिये मूर्तिका दर्शन, वंदन, पूजन नित्य करना चाहिये। यदि अरिहन्त भगवान साक्षात् मिलें तो उनकी सेवामें उपस्थित हो

कर अष्ट द्रव्यसे भक्ति पूजन करना चाहिये. अन्यथा उनकी वैसी ही ध्यानाग्र शान्तिमय वीतराग प्रतिमाको स्थापित करके उसके द्वारा अरिहन्त भगवान का पूजन करना चाहिये। हमारी आत्मा पर जैसा प्रभाव साक्षात् अरिहन्त के ध्यानमय वीतराग प्रतिष्ठित प्रतिमाके दर्शन व पूजनसे पडता है वैसा ही प्रभाव उनकी ध्यानमय वीतराग प्रतिष्ठित प्रतिमा के दर्शन व पूजनसे पडता है। प्रगट देखा जाता है कि जैसे चित्र देखनेमें आते हैं वैसे ही भाव देखने वाले के चित्रमें अवश्य पैदा होते है। मन्दिरमें भगवानकी वीतराग शान्तिमय प्रतिमाके देखनेसे चित्त आपही आप वैराग्य के भावोंसे

भर जाता है। और उनके निर्मल गुण स्मरण हो आते हैं। इसलिये गृहस्थोंको चाहिये कि वे नित्यप्रति अष्टद्रव्यसे भगवान का पूजन करें। प्रतिमाकी स्थापना भावोंको बदलने के लिये है, प्रतिमासे कुछ मांगनेकी न जरूरत है, न प्रतिमा इसलिये स्थापित ही की जाती है। अतः दर्शन तो प्रत्येक बालक बालिका, स्त्री पुरुषको नित्य करना चाहिये। पूजन यदि नित्य न हो सकें तो कभी कभी अवश्य करना चाहिये। जहां प्रतिमा या मन्दिरका समागम न हो तो वहां परोक्षध्यान करके स्तुति ही पढ़ लेनी चाहियें, तथा एक दो जाप और जप करके भोजन करना चाहिये। पूजा व दर्शन का फल सूत्रों में अनेक

जगह हित सुख, क्षमा और मोक्षका दाता कहा है। इससे प्रत्येक श्रावक और श्राविका को विधि सहित नित्य दर्शन और प्रतिदिन पूजन अवश्य करना चाहिये।

प्रभुदर्शन.

जिस प्रकार हम अपने पूज्य के सामने जाते हुए बस सांसारिक विचारोंको छोड कर मान या प्रेमके विचार दिलमें रखते है उसी प्रकार हमें मंदिरजीमें भगवानके दर्शनों को जाते हुएभी करना चाहिये। दर्शन शब्दका अर्थ क्या है? किसी पूज्यके सामने, हाथ जोडकर, मनमें भक्ति के भाव रखकर, उन्हें एक दृष्टिसे देखनेका नाम दर्शन करना है।

और दर्शनका अर्थ यह हैं कि दूसरे के प्रति विनय दिखलाना और उनका मान करना। दर्शनका दूसरा अर्थ सम्यक्त्वभी हैं। दर्शन करनेसे सम्यक्त्वकी प्राप्ति होती है और प्राप्त हुआ सम्यक्त्व निर्मल होता है।

इसलिये दर्शन किये विना हमें भोजन कभी नहीं करना चाहिये। रोज सवेरे उठकर मुह, हाथ, पाव, धोकर सबसे पहिले प्रभुके दर्शन करने चाहिये। घरसें निकले पीछे दर्शन करनेके सिवाय और कोइ विचार हमारे मनमें नहीं होने चाहिये। रास्तेमेंभी कोइ दूसरी बात नहीं करना चाहिये। ऐसा करनेसे हमें दर्शनोंका फल मिलेगा। इस जन्म और

दूसरे जन्मोंमें हमारा कल्याण होगा। हमारे दुःख दूर होंगे और हम सुखके भागी होयेंगे।

*देव दर्शन विधि.

श्री मंदिरजीमें देवदर्शन करने के लिये जाते समय सम्पूर्ण और स्वच्छ वस्त्र पहन कर उत्तरासंग करके जाना चाहिये। क्योंकि प्रभु तो राजा और इन्द्रोसेभी बडे हैं इसलिये उनके सामने जैसे तैसे (अशुद्ध) वस्त्रों समेत नहीं जाना चाहियें।

मंदिरजीके पहिले दरवाजेमें प्रवेश करतेही पहिली [1]निसिही (संसारिक सावद्य

*आत्मानंद जैन शिक्षावली दूसरा भागमेंसे उद्धृत।

१. त्याग।

कार्य छोडने रूप) करनी चाहिये। ईस समय अपने घर बारके कामोंका मनमें विचार न होना चाहिये परन्तु यदि मंदिरजीका कोइ काम हो तो उस पर ध्यान दे सकते हो। और मंदिरजीमें जहां कही कूडा कचरा जालीआदि दिखाइ दे उसेभी यत्ना पूर्वक दूर कर सकते हो।

जब प्रभु प्रतिमा दूरसेही नजर आने लग जाय तब दोनों हाथ जोडकर [१] "नमो जिणाणं" कहना चाहिये। फिर प्रभुकी दाई तरफसे उनकी तीन प्रदक्षिणा देनी चाहियें।

१ "नमो जिणाणं" अर्थात् राग-द्वेषको जीतनेवाले भगवानको नमस्कार हो।

जिससे हमारा संसारमें बार बार आना जाना कम हो और रत्नमय (सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र) की प्राप्ति हो। अर्थात् अपने अन्दर श्रद्धा विवेक और सदाचार प्रगट हो।

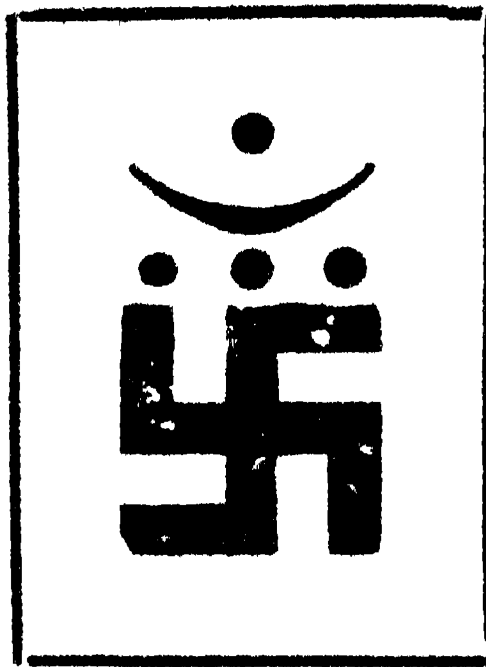
फिर जिस जगह भगवान विराजमान हो उनके बीचके द्वारपर (मूल गंभारे के पास) पहुंच कर दूसरी 'निसिही' कहनी चाहिये, और झुककर "दर्शनं देव देवस्य! तुभ्यं नमः" आदि जिनेश्वर भगवानकी स्तुतिएँ कह भगवानको पूर्ण भावसे नमस्कार करना चाहिये। दूसरी निसिही करनेसे मंदिर संबंधी कामकाज का त्याग होता है और दर्शन करनेका काम

आरम्भ होता है। [1]दर्शन करते समय पुरुषोंको प्रभुको दाईं तरफ और स्त्रियों को बाईं तरफ खडे होना चाहिये। और वहाँ मीठे स्वर और शांत चित्तसे श्लोक या दोहे आदि बोल कर प्रभुका गुण कीर्तन करना चाहिये। (इस प्रकार स्तुति करनेके बाद धूप पूजा करनी चाहिये) तत्पश्चात् चैत्यवंदन करने के स्थान पर आकर उत्तरासंगसे भूमिको तीन बार पुंज कर, बैठ कर पाट पर स्वच्छ अखंड चावलोंसे बडा सुंदर साथिया करना चाहिये। पहिले तीन डेरियां करनी चाहियें और उसके नीचे साथिया

---

१ यदि पूजा करनेके लिये जाओ तो मूल गंभारेमें प्रवेश करते दूसरी निसिही कहो और पूजाका काम आरम्भ करदो।

करना चाहिये। और उसके उपर सिद्ध-शिला तथा सिद्ध स्नान बनाने चाहिये । जैसेः—



साथिया और सिद्ध स्थान पर नैवेद्य (बताशे, पेंडे आदि) तथा फल (सुपारि नारियल आदि) चढाने चाहियें। नैवेद्य और फल अच्छे होने चाहिये। क्योंकि भगवानके आगे जो कुछभी चढाया जाय वह सब शुद्ध और अच्छी वस्तु होनी चाहिये । साथिया करके

उस पर दृष्टि रक्खकर दोनों हाथ जोडकर प्रभुसे यह प्रार्थना करनी चाहिये "हे प्रभो। ज्ञान दर्शन और चारित रूप यह तीन रत्न दे कर और देव, मनुष्य, तिर्यंच और नरक इन चार गतियोंसे छुडा कर मुजे ऐसी शक्ति दीजिये जिससे मैं सिद्ध स्थानको प्राप्त कर सकूं" पूजा करनेवाला पूजा करके पीछे उपरोक्त विधि करे। और बादमें चैत्यवंदन करें।

फिर तीसरी "निसिही" कह कर एक खमासमण दे कर [1]इरियावहियं से प्रकट लोगस्स तक कहे। बादमें तीन खमासण दे

---

१. चैत्यवंदनके पहिले एक खमासमण इरियावहियं, तस्स उत्त, अन्नत्थ० बादमें लोगस्स का काउस्सग्ग पीछे प्रगट लोगस्स कहें।

कर चैत्यवंदन करना चाहिये। इस निसीहि से दर्शन अथवा पूजा करनेके काम का त्याग होता है और चैत्यवंदनका काम आरम्भ होता है। चैत्यवंदन विधिपूर्वक करना चाहिये। इधर उधर किसी तरफभी ध्यान न करके केवल प्रभुके मुखपर ही दृष्टि रखनी चाहिये। चैत्यवंदनमें स्तवन ऐसे मधुर स्वरसें कहने चाहिये। जिसे सुनकर दूसरोंकोभी आनन्द मिलें। स्तवनमें प्रभुके गुणोका वर्णन होना चाहिये। स्तवन बहुत उंचे स्वरसे न गाना धीरे धीरे कहने चाहिये। जिससे शांतिके साथ गाते हुये दूसरे किसी मनुष्यको बाधा न पहुँचे। कायोत्सर्ग (काउसग्ग) करते हुए

दृष्टि या तो नाक के सिरे पर या प्रभुजी पर रखनी चाहिये।

चैत्यवंदनके बाद यदि गुरु के पास पच्चक्खान न लिया हो तो एक खमासमण दे कर उसका उपयोग करे। प्रभुजीकी आज्ञानुसार हमको नित्य प्रति कमसे कम एक पच्चक्खान अवश्य करना चाहिये। थोडी सामग्रीसे जीवन व्यतीत करना नतीजे में जीवन सुखी रहता हैं। ज्यादा सामग्रियों से रहनेकी यदि आदत हो जावे तो उसी माफिक सामग्रियां न मिलने पर प्रायः अपने मनको दुःख होता हैं। अपने मनको हंमेशां त्याग, सादाई, सहनशक्ति तथा काबूमें रहनेकी शिक्षा देनी

चाहिये। पच्चक्खान कई प्रकारके हैं। जैसे नवकारसि, पोरसि आदि। यदि पच्चक्खाण लिया हो तो जब घर आवे तब पच्चक्खानका समय पूरा होने पर (जैसे नवकारसीका सूर्योदय होनेसे दो घडी पूरी हो जावे जब पोरसीका एक प्रहर होने पर इसी प्रकार और भी गुरु गमसे जान लेना) मुंठी बंद कर तीन नवकार गिनना जिससे मतलब पच्चक्खान पारना है पीछे मुंहमे पानी डालना चाहिये।

चैत्यवंदन समाप्त हो जाने पर देवदर्शनका कामभी समाप्त हो जाता है। फिर यह दिखलानेके लिये "हे प्रभो! आपही मेरे

सच्चे देव हो" धीरे धीरे घंटा बजाना चाहिए जिस में दूसरों को बाधा न पड़ें मंदिरजीसे बहार निकलते हुए पिछलेही पैरोंसे निकलना चाहिये। कि जिससे प्रभुजीकी ओर पीठ न हो। मंदिरजीमें आते जाते मार्गको देख कर चलना चाहिये। ऐसा न हो की कहीं ठोकर लग जाय, या कांटाही चुभ जाये या कोइ जीव जन्तु ही पांवके नीचे आ जायें।

जिनपूजा

पूजा करनेवालेको शुद्ध जलसे स्नान करके पूजा करनी चाहियें। पूजाके वस्त्र शुद्ध साफ और सफेद होने चाहियें। पूजा करते

समय नासिका तक आठ तहोंवाला मुखकोश बांध लेना चाहियें। फिर बडे विवेक और शुद्धता के साथ चंदन घिस कर उसमें पवित्र केसर और बरास (भीमसेनी कर्पुर)आदि वस्तुएं मिला लेनी चाहियें। इसमें से एक कटोरीमें अलग चंदनादि लेकर अपने मस्तक, गले, छाती और नाभि पर तिलक करना चाहियें। फिर दूसरी कटोरीमें चंदनादि लेकर मूल गंभारोंमें जाना चाहिये। प्रथम मूल गंभारा फूल-(मुलायम) झाड्से साफ करें बादमें प्रभुके उपरसे गहने, आंगी, फूल आदि उतारने चाहिये (उतरे हुए फूलोंको ऐसी जगह पधराना चाहिये जहां उन पर किसीका पैर न आवे)। फिर मोर पींछीसे पुंज कर

पंचामृत (गऊंका दूध, दहीं, घी, मिश्री और पानी) से कलश भरकर, और "ॐ ह्रीं श्रीं परम पुरूषाय परमेश्वराय जन्मजरामृत्यु निवारणाय श्रीमते जिनेन्द्राय जलं पूजा यजामहे स्वाहा" यह मंत्र कहकर प्रभुका प्रक्षाल करना चाहिये। फिर एक पात्रमें पानी लेकर उसमें एक छोटासा कपडा भिगो भिगो कर उससे चंदन आदि साफ करलेना चाहियें। फिर जहा हाथ न फिर सके ऐसे स्थान पर खसकी कूचीसे प्रतिमाजीको धीरे धीरे खूब साफ करना चाहिये और शुद्ध पानीसे प्रक्षाल करना चाहिये। फिर तीन अङ्ग लूहणा (कपडों) से प्रभुके अंगको उपयोग सहित धीरे धीरे साफ करना चाहिये।

न्हवनका जल ऐसी जगह डालना चाहिये जहां किसीका पैर न आवे और जल्दी सुक् जावे।

पूर्वोक्त विधिसे जल पूजा करके शुद्ध चन्दनादिसे प्रभुके २चरण, २ जानु, २ कर, २ कंधे, १ मस्तक, १ भाल, १ कण्ठ, १ उर, और नाभि १ इस नव अंगो पर १३ तिलक करने चाहियें। साथ साथ निम्न लिखित नव अंग पूजनेके दोहे बोलने चाहियें।

अंगूठा (चरण)-जल भरी संपुटपत्रमां,
युगलिक नर पूजंत।
ऋषभ चरण अंगूठडो,
दायकभव जल अंत ॥१॥

घुंटन (जानु)–जानु बले काउस्सग्ग रह्या,
विचर्या देशविदेश।
खडां खडां केवल लह्युं,
पूजो जानू नरेश ॥२॥
हाथ (कर)–लोकांतिक वचने करी,
वरस्या वरसीदान।
करकांडे प्रभु पूजना,
पूजो भवि बहुमान ॥३॥
खंभा (स्कंध)–मान गयुं दोय अंशथी,
देखी वीर्य अनंत।
भुजा बले भवजल तर्या,
पूजो खंध महंत ॥४॥
मस्तक–सिद्ध शिला गुण उज्ज्वली,
लोकांते भगवंत।

वसीया तेणे कारण सवि,
शिर शिखा पूजंत ॥५॥
ललाट-(भाल) तीर्थंकर पद पुण्यथी,
त्रिभुवन जन सेवंत ।
त्रिभुवन तिलक समा प्रभु,
भाल तिलक जयवंत ॥६॥
कंठ-सोल पहोर प्रभु देशना,
कंठ विवर वर्तूल ।
मधुर ध्वनि सुरनर सुणे,
तीणे गले तिलक अमूल ॥७॥
हृदय (उर)-हृदय कमल उपशम बले,
बाल्या रागने रोष ।
हिम दहे वन खंडने,
हृदय तिलक संतोष ॥८॥

नाभि-रत्नत्रयी गुण उज्ज्वली,
सकल सुगुण विश्राम ।
नाभि कमलनी पूजना,
करतां अविचल धाम ॥९॥
उपदेशक नव तत्त्वना,
तिणे नव अंग जिणंद ।
पूजो बहुविध रागशुं,
कहे शुभवीर मुणींद ॥१०॥

पूजा करते समय और कुछ बोलना नहीं चाहियें। फिर मंत्र बोलकर पुष्प पूजा करनी चाहियें। पुष्प भी शुद्ध होने चाहियें। माली आदिसे लिये होवें तो उन पर पानी छिडक लेना चाहिये। फूलोंकी पंखडियां आदि टूटी

हुई न हों, पुष्प संपूर्ण हो फिर मंत्र बोल कर धूप पूजा करनी चाहिए धूप पूजा करके धूप-दानीको प्रभुकी नाईं ओर कुछ दूर फासले पर रख देना चाहिये। फिर घीका दीपक जलाकर दीपक पूजा करनी चाहियें और पूजा करके दीपक प्रभुकी दाईं ओर लालटैन (फानूस) में रखदेना चाहियें। पूजा शुरु करनेसे पहिले दीपक और धूप प्रगट करने चाहिये।

प्रायः प्रभुकी पूजा ८ वस्तुओंसे की जाती है. जिनमेंसे ५ कातो ऊपर वर्णन हो चुका है। और बाकी तीन (अक्षत, नैवेद्य और फल) चैत्यवंदन करते समय साथिये पर चढाई जाती हैं।

卐 साथीया करते बखत निम्न लिखित बोलें 卐

दर्शन ज्ञान चारित्रना,
आराधनथी सार ।
सिद्ध शिलानी उपरे,
हो मुज वास श्रीकार ॥१॥

अक्षत पूजा करतां थकां,
सफल करूं अवतार ।
फल मांगुं प्रभु आगले,
तार तार मुझ तार ॥२॥

संसारिक फल मागीने,
रवडयो बहु संसार ।
अष्ट कर्म निवारवा,
मागुं मोक्ष फल सार ॥३॥

चौहुं गति भ्रमण संसारमां,
जन्म मरण झंजाल ।
पंचम गति विण जीवने,
सुख नहीं त्रिहुं काल ॥४॥

॥ जैनमंदिरमें करनेकी विधिका क्रम ।

देरासरका द्वारके आते, हि मैं घरकी और संसारकी सर्व बातोंको त्यागता हूं. एसी प्रतिज्ञा के लिये "निस्सीहि" कहकर प्रवेश करना, पिछे जिनेश्वरप्रभुकी मूर्तिको देखते, हि 'नमो जिणाणं, कहकर करदोयको जोड-कर मस्तकको झूकाकर नमस्कार करना.

ततः देरासरकी जीमणी बाजुं देरासरकी

तीन प्रदक्षिणाएं देनी, और मनमें एसी भावना करनी कि "संसार भ्रमणसें छुटने के लिये प्रभुकी जीमणी बाजुसें तीन प्रदक्षिणा अनुक्रमसें ज्ञान-दर्शन,-चारित्र्यकी प्राप्तिके लिये देता हूं. तदनंतर गभारामें प्रवेश करके दूजी "निसीहि" कहना और चिन्त्वन करना के देरासर संबंधी अभि सावद्य व्यापारको मैं त्यागता हूं.

प्रभुके सन्मुख खडे रहकर स्तुति करना

छे प्रतिमा मनोहारिणी,
दुःखहरी श्री वीरजिणंदनी,
भक्तोने छे सर्वदा सुखकरी,
जाणे खीली चंदनी;

आ प्रतिमाना गुण भाव धरीने,
जे माणसो गाय छे,
पामी सघळा सुख ते जगतना,
मुक्ति भणी जाय छे ॥१॥

देवाधिदेव ! परमेश्वर ! वीतराग !
सर्व्वज्ञ ! तीर्थंकर ! सिद्ध ! महानुभाव !
त्रैलोक्यनाथ ! जिनपुंगव ! वर्धमान !
स्वामिन् ! गतोऽस्मि शरणं चरणद्वयं ते ॥२॥

राजेमती गुणवती, सती सौम्यकारी,
तेने तमे तजी थया, महाब्रह्मचारी;
पूर्वे भवे नव लगे, तुम स्नेह धारी,
हे नेमिनाथ भगवंत परोपकारी ॥१॥

सम्मेतशैलशिखरे प्रभुपार्श्व सोहे,
शंखेश्वरा अमीझरा, कलिकुंड मोहे;
श्री अश्वसेन कुलदीपक मातु वामा,
नित्ये अचिंत्य महिमा प्रभु पार्श्वनामा ॥१॥

प्रभुदर्शन सुख संपदा, प्रभुदर्शन नवनिध,
प्रभुदर्शनथी पामीये, सकल पदारथ सिद्ध;
भावे भावना भावीए, भावे दीजे दान,
भावे जिनवर पूजीए, भावे केवळ ज्ञान ॥२॥

अनंतर साथीआ करना.

साथीआ करती वखत भावनेका दूहा

तिहां पहले चावल (चोखा) की सिद्ध शिला और तिनकी नीचु तीन ढगलीएं करती समय निम्नलिखित भावना भावनी.

सिद्ध शिला और ढगलीएं करती समय

दर्शन, ज्ञान, चारित्रना, आराधनथी सार।
सिद्ध शिलानि उपरे, हो मुज वास श्रीकार १

साथीआ करते समय तथा फल समर्पणके समय

अक्षत पूजा करतां थकां, सफल करुं अवतार।
फल मागुं प्रभु आगळे, तार, तार, मुज तार १
संसारिक फल मागीने, रवडयो बहु संसार।
अष्ट कर्म निवारवा, मागुं मोक्ष फळ सार २
चिहुं गति भ्रमण संसारमां, जन्म मरण जंजाल।
पंचम गति विण जीवने, सुख नहिं त्रिहुं काळ ३

त्यारबाद द्रव्य पूजासे निवृत्तिके लिये तीसरी निसीहि कहकर तीन खमासमण देकर चैत्यवंदन करना.

॥ प्रभुकी पूजा करनेकी विधि ॥

मन, बचन और कायाशुद्धि, तथा वस्त्र-शुद्धि पूर्वक मुखपे अठपडा मुखकोषको बांधकर, प्रथममूर्तिके उपर दृष्टिको ठहराकर प्रभुके–अंग परसे निर्माल्यको त्यागना. और मयुरपीच्छिसे प्रमार्जन करना तथा पंचामृत (गौका दुग्ध, दहीं, घृत, शर्करा और जल) से अभिषेक करना.

दुग्धका प्रक्षालन करते २ पढना

मेरु शिखर नवरावे हो सुरपति,
मेरु शिखर नवरावे,
जन्मकाळ जिनवरजीको जाणी,
पंचरूप करी आवे हो सुरपति,
मेरु शिखर नवरावे ॥१॥

(यदि केसर चिटक गया हो तो वहां वालाकुंचीका उपयोग करना) और शुद्ध जलसे प्रभुका अंगको पक्षालन करें.

जलका प्रक्षालन करते समय पढनेका दुहा.

ज्ञान कलश भरी आतमा,
समता रस भरपुर;
श्री जिनने नवरावतां.
करम थयां चकचूर, ॥ १ ॥

जल पूजा करते समय इस प्रकारकी भावना भावनी कि;—" हे प्रभो ! जलसे आपकी पूजा करके मैं सा चाहता हूं कि— आपने स्नान करानेसे जैसा बाह्यमळ दूर होता है. वैसा मेरा अन्तरमळ (कर्मरूपी मळ) दूर हो.

अनन्तर श्वेत, कोमळ व्रणे अंगुलेसे अंगको लुछना और कटोरी हस्तमें धरकर केसरयुक्त चंदनसे प्रभुका नौ अंगमें तिलक करना.

"नौ अंगमे अर्चन करते समय पढनेका नौ दुहे"

प्रथम कहे हूए दूहे बोलना.

चंदन पूजा करते समयकी भावना

'हे प्रभो आपकी चंदन पूजा करके में भि ऐसी इच्छा धरता हुं कि जैसे चंदन अंग प्रत्यंगोमें-शीतल है वैसाहि मेरा चित्तभी काम क्रोधादि तापोंसे दूर होकर शान्त (शीतळ) हो.

फिर हरेक जातके सुगन्धी पुष्पोंसे प्रभुके अंगका पूजन करना माल्यादि धराना.

'पुष्पोंको धरानेके समय पढनेका'

प्रभु कंठे ठवी फुलनी माळा,
फुल थकी व्रत उच्चरीए रे;
चित्त चोखे चोरी नवि करीए,
नवि करिए तो भवजळ तरीएरे चित्त०
स्वामी अदत्त कदापी न लीजे,
भेद अढारे परिहरीएरे चित्त० ॥१॥

पुष्प पूजा करते समयकी भावना

हे प्रभो ! आपको उन पुष्पोंको चढानेसे मुझको पंचाचारकी प्राप्ति हो.'

तत्पश्चात् सुगन्धी दशाङ्ग वा अष्टांग धूपको उवेखनेकी समय पढनेका दूहा.

अमे धूपनी पूजा करीएरे,
ओ मन मान्या मोहनजी;

प्रभु धूप घटा अनुसरीएरे,
ओ मन मान्या मोहनजी;
प्रभु कोइ नहि तुम तोलेरे,
ओ मन मान्या मोहनजी ॥१॥

धूप पूजा करते समय ऐसी भावना भाववी कि—हे प्रभो आपके समक्ष धूप करने से जैसे बाह्य अशुभ पुद्गल दूर होता है, इस तरह धूप पूजासे मेरा आन्तरिक अशुभ पुद्-मल दूर हो, और शुभ भावनाकी श्रेणी धूएके धूवोंकी तरह उंचे हो.

ततः दीपक पूजा करना उसका दूहा.

द्रव्य दीपक तमहरे, ज्ञान दीपक हरे अज्ञान,
तेणे दीपकनी पूजना, करो भवि बहुमान् ॥१॥

दीपक पूजनकी भावना—हे प्रभो ! आ

दीपक पूजा यथा द्रव्य अंधकारको दूरकर प्रकाशको फैलाती है, तथा आपकी दीपक पूजा करनेसे मेरा आत्मामें अनादि कालसे रहता हुआ अज्ञानरूप अन्धकार दूर हो और ज्ञानरूप दीपक प्रगट हो.

तदवसरे उज्ज्वल अक्षतोंसे पूजन करना चाहिए

दुहो.

अक्षत पूजा करतां थकां, सफळ करुं अवतार,
फळ मागुं प्रभु आगळे, तार तार मुज तार.

अक्षत पूजा करते बख्तकी भावना—' हे प्रभो ! जैसे तंदुलका नाम अक्षत हैं और जाति से भि उज्ज्वल है, वैसा कर्ममलसे उज्ज्वल मेरा आत्मा सदाके लिये अक्षयपदको प्राप्त करें.

नैवेद्य पूजा करनी तिनका दूहा

अणाहारी पद पामवा, नैवेद्य पूजा सार;
नैवेद्य धरुं प्रभु आगळे, पामुं भवनो पार.

नैवेद्य पूजाकी भावना-" हे प्रभो! आप निर्वेदी और अणाहारी हो लेकिन आपका सन्मुख नेवेद्यधरकर आपको इतनीहि प्रार्थना करता हुं कि मुझको क्षुधाका दोषसे मुक्तकर आपके जैसा अणाहारी पद परमानंद भय प्राप्त हो.

फळ पूजाका दूहा.

संसारिक फळ मागीने, रडवडयो बहु संसार,
अष्टकर्म निवारवा, मागुं मोक्ष फळ सार. ॥१॥
चिहुं गति भ्रमण संसारमां, जन्म मरण जंजाल,
पंचम गति वीण जीवने, सुख नहिं त्रिहुंकाळ. ॥२।

फळ पूजा वखतनी भावना.

हे प्रभो ! यह फळ आपके चरणकमलोमें धरकर इतना हि चाहता हुं कि यह फलपूजा करनेसे मुझको मोक्षरूप फल प्राप्त हो तदनंतर विधि मुजब चैत्यवंदन करें.

विविध विषयोंके प्रश्नोत्तर संग्रह

१ प्र० परमेष्ठी किसे कहते है ?

उ० जे जीव परमे अर्थात् उत्कृष्टे स्वपरूमें समभावमें स्थित हे वोही परमेष्ठी कहलाते है ।

२ प्र० परमेष्ठी कितने प्रकारके है ?

उ० परमेष्ठी पांच प्रकारके है ।

३ प्र० अरिहंत किसे कहते है ?

उ० अरि याने राग-द्वेषादि अभ्यन्तर शत्रुको हंत यानि हननेवाले जो केवल ज्ञान प्राप्त करके भव्य जीवोको प्रतिबोध देते है और प्रतिबोध देनेके लिये विचरते है ऐसे बारह गुणयुक्त तीर्थंकर भगवानको अरिहंत कहते है। अरिहंत भगवानके बारह गुण है।

४ प्र० सिद्ध भगवान किसे कहते है ?

उ० आठ कर्मोका सर्वथा क्षय करके जिन्होंने मोक्षपद प्राप्त किया है उनको सिद्ध भगवान कहते है सिद्ध भगनके आठ गुण है।

५ प्र० आचार्य महाराज किसे कहते है ?

उ० पांच आचारको जो पाले और अ-

न्यको पलावे एवं धर्मके जो नायक है साधुओमें जो राजा समान है उनको आचार्य महाराज कहते है। आचार्य महाराजके छत्तीस गुण है।

६ प्र० उपाध्यायजी महाराज किसे कहते है?

उ० जो सिद्धान्तको पढे और अन्यको पढावे और पच्चीसगुणयुक्त हो उनको उपाध्याय कहते है साधुओमें आचार्य महाराज राजा समान है। और उपाध्यायजीमहाराज प्रधान समान है उपाध्यायजीमहाराजके पच्चीस गुण है?

७ प्र० साधु किसे कहते है?

उ० जो मोक्षमार्गको साधनेके लिये यत्न करे सर्वविरति (साधुधर्म) चारित्र

लेकर सत्ताईस गुण युक्त हो उनको साधु कहेते है। साधुमहाराजके सत्ताईस गुण है।

८ प्र० पहिले सिद्धको नमस्कार करना चाहिये अरिहन्तोको कैसे ?

उ० यद्यपि कर्म-विनाशकी अपेक्षासे अरिहन्तोसे 'सिद्ध' श्रेष्ठ है। तो भी कृतकृत्यताकी अपेक्षासे दोनो समान ही है और व्यवहारकी अपेक्षासे तो सिद्धसे अरिहन्त ही श्रेष्ठ है। क्योंकि सिद्धोके परोक्ष स्वरूपको बतलाने वाले 'अरिहन्त' ही है इसलिये व्यवहार-अपेक्षासे अरि-

हन्तोको श्रेष्ठ गिनकर पहिले उनको नमस्कार किया गया है।

९ प्र० जैन किसे कहते है ?

उ० जिनेश्वर भगवानने फरमाये हुए धर्मको माननेवालेको जैन कहेते है और जो क्रोधादि चार कषाय एवं पांच इद्रियोको जीतनेका प्रयत्न करे उनको जैन कहते है।

१० प्र० जिन किसे कहेते है ?

उ० जिन्होंने राग-द्वेष मोह, अज्ञान, आदि अढारह भाव शत्रुओंको सर्वथा जितके अनन्त ज्ञान अनन्त सुख प्रगट किया है, उन्हे जिन कहते है।

११ प्र० जिनेन्द्र किसे कहते है ?

उ० जिन अर्थात् सर्वज्ञ वीतराग देवोमें (इन्द्र) श्रेष्ठ हो उन्हें जिनेन्द्र कहते है !

१२ प्र० तीर्थंकर किसे कहते है ?

उ० साधु साध्वी श्रावक श्राविकरूप चतुर्विधसंघकी स्थापना करके धर्म तीर्थ प्रवर्त्ताकर अनेक भव्यजीवको संसारसमुद्रसे पार करते है वेही तीर्थंकर कहे जाते है।

१३ प्र० धर्मका मूल क्या है ?

उ० विवेक पूर्ण अहिंसा और सत्य

१४ प्र० जैन कोन बन शकता है ?

उ० उच्च नीतिमान मनुष्यही जैन बन शकता है चाहे वह किसीभी जतिका

हो लेकिन आचार विचार जैन धर्मको मुताबिक होने चाहिये।

१५ प्र० दैनिक षट्कर्म कौन कौनसे है।

उ० नित्य प्रति जिनेश्वर भगवानकी पूजा करना, गुरुकी भक्ति करना, स्वाध्याय (तत्वबोधक धर्मशास्त्रका विनयपूर्वक समझकर पढना) अर्थात् धर्मतत्त्व–ज्ञानको बढाना, संयम (चारित्र)का पालन करना, तपका अभ्यास करना और दान देना ये गृहस्थके छह दैनिक कर्म है।

१६ प्र० नीतिका क्या अर्थ है?

उ० जिस रस्तेपर चालनेसे हमको सुख हो हमारे अन्दर अच्छे २ गुण आवे

और सबलोग हमारी मान करे उसे नीति कहते है! सबसे पहिले नीतिका यह उपदेश है कि सात व्यसनोका त्याग करना चाहिये।

१७ प्र० सात व्यसन कौनसे है?

उ० (१) जूआ खेलना (२) मांस खाना (३) शराब पीना (४) शिकार खेलना (५) वेश्यागमन करना (६) चोरी करना (७) परस्त्रीगमन करना.

१८ प्र० नौ तत्वके नाम कौनसे है?

उ० (१) जीव–जो सुख दुःखका जाने ज्ञान जिसका लक्षण है।

(२) अजीव–जो सुखदुःखको न जाने ऐसे जडपदार्थ

(३) पुण्य—भले (अच्छे—परोपकारके) काम, जिनसे सुख हो।

(४) पाप-बुरेकाम जिनसे दुःख मिले।

(५) आश्रव—शुभाशुभ कर्मोंका आना।

(६) संवर—कर्मका रुकना।

(७) निर्जरा—कुछ अंशसे कर्म दूर होना।

(८) बंध—जीवके साथ कर्मोंका बंधना।

(९) मोक्ष—सब कर्मोंका छूट जाना और अनन्त सुखकी प्राप्ति होना।

१९ प्र० धर्म किसे कहते है ?

उ० जो दुर्गति (अधोगति) में प्रयान करते हुए जीवको बचानेके कारण धर्म कहा जाता है। यह संयमादि

दशप्रकारवाला सर्वज्ञ केवली भगवा-
नका कहा हुआ धर्म मुक्तिके लिए
समर्थ है। अथवा जा बूरी (नीच)
गतिमेंसे बचाकर उच्च गतिमें ले
जाय अर्थात् क्रमसे मोक्षमतिमें पहों-
चा देवे उसको धर्म कहते है।

जीव और पंच परमेष्ठी।

२० प्र० परमेष्ठी क्या वस्तु है?
उ० वह जीव है।

२१ प्र० क्या सभीजीव परमेष्ठी कहलाते है?
उ० नहि।

२२ प्र० तब कौन कहलाते है?
उ० जो जीव 'परमे' अर्थात् उत्कृष्ट
स्वरूपमें समभावमें अर्थात् स्थित है

वेही परमेष्ठी कहलाते है।

२३ प्र० परमेष्ठी और उनसे भिन्नजीवोमें क्या अन्तर है?

उ० अन्तर आध्यात्मिक–विकास होने न होनेका है। अर्थात् जो आध्यात्मिक-विकासवाले वह निर्मल आत्मशक्ति-वाले है वे परमेष्ठी और जो मलिन आत्मशक्तिवाले है वे उनसे भिन्न है।

२४ प्र० जो इस समय परमेष्ठी नहि है क्या वे भी साधनोके द्वारा आत्माको निर्मल बनाकर वैसे बन शकते है?

उ० अवश्य।

२५ प्र० तब तो जो परमेष्ठी नहि है और जो

है उनमें शक्तिकी अपेक्षासे क्या अन्तर हुआ ?

उ० कुछ भी नहि। अन्तर सिर्फ शक्ति-योके प्रगट होने न होनेका है। एकमें आत्मशक्तियोंका विशुद्धरूप प्रगट हो गया है दूसरोमें नही।

२६ प्र० जब असलियतमें सब जीव समान ही है तब उन सबका सामान्य स्व-रूप (लक्षण) क्या है ?

उ० रूप, रस, गन्ध, स्पर्श आदि पौद्ग-लिक गुणोका न होना और चेतनाका होना, यह सब जीवोका सामान्य लक्षण है जो रस, रूप, गन्ध और शब्दोसे रहित है, जो अव्यक्त स्पर्श

रहित है, अतएव जो इन्द्रियोसें अ-
ग्राह्य है जिसके कोइ संस्थान—आकृ-
ति नही है। और जिसमें चेतना
(ज्ञान) शक्ति है उसको जीव जानना
चाहिये।

२७ प्र० व्यवहारनय और निश्चयनयसें जीव-
का लक्षण क्या है ?

उ० जो व्यवहारनयसे अच्छे या बुरे,
या दोनो प्रकारके कर्मोंका करनेवा-
ला उनके फलोको भोगने (अनुभव
करने) वाला, संसारमें भ्रमण कर-
नेवाला और सर्वथा कर्मोंका क्षय
करके मोक्षकोभी पानेवाला एवं
द्रव्य प्राणोंको धारण करनेवाला जीव

कहलाता है। निश्चय नयसे ज्ञान, दर्शन, चारित्र गुणसंपन्न यानि चेतना (ज्ञान) लक्षण युक्त जीव कहलाता है।

२८ प्र० प्राण किसे कहेते है ?

उ० जिनके संयोगसें यह जीव जीवन अवस्थाको प्राप्त हो और वियोगसें मरण अवस्थाको प्राप्त हो इसको प्राण कहते है।

२९ प्र० प्राण कितने प्रकारके है ? और कोनसे है ?

उ० प्राण दो प्रकार के है। (१) द्रव्यप्राण (२) भावप्राण।

३० प्र० द्रव्यप्राण किसे कहते है ! और कौनसे है !

उ० आत्माके बाह्य लक्षणको द्रव्य प्राण कहते है। द्रव्यप्राण दश है पांच इन्द्रियाँ (त्वचा, जीभ, नाक, आंख, और कान,) त्रिविधबल (मनोबल, वचनबल और कायबल,) श्वासोश्वास और आयु ये दश द्रव्यप्राण है।

३१ प्र० भावप्राण किसे कहते है ?

उ० जीवके ज्ञान, दर्शन, और चारित्र आदि गुणोको " भावप्राण " कहते है। ज्ञान (चेतना) को भावप्राण कहेते हैं संसारी जीवोको द्रव्य और भाव दोनों प्रकारके प्राण होते

है और सिद्ध के जीवोको सिर्फ भाव-प्राण होते है, क्योंकि द्रव्यप्राणोका आधार शरीर है और सिद्धको शरीर नहि होता इससे वे अशरीरी कहे जाते है।

३२ प्र० जीवके कितने भेद है?

उ० जीवके मुख्य दो भेद है
(१) मुक्त (सिद्ध) (२) संसारी

३३ प्र० मुक्त और संसारी जिव किसे कहते हैं ?

उ० मुक्त जीव इसकु कहते हैं जो संसारसे छूट गये हो, जिन्होने राग, द्वेष, और मोहका नाश करके जन्म मर-

णादि दुःखोंका नाश किया हैं तथा
जो शरीररहित हो गये है।

३४ प्र० संसारी जीव कितने प्रकारके है ?

उ० संसारी जीवके मुख्य दो भेद है।
(१) त्रसजीव (२) स्थावरजीव।

३५ प्र० त्रस और स्थावर किसे कहते है ?
और वे कितने प्रकारके है ?

उ० (१) त्रसजीव—जो स्वयं चल फिर
कर शकते है।
(२) स्थावर—जो इच्छानुसार हलन
चलन क्रिया नही कर शकते हैं।
(संसारी जीवोके विस्तारसे
चौदह भेद है तथा ५६३ प्रभेद
होते है।)

३६ प्र० त्रस और स्थावर जीवके प्रकार बतलाइयें ?

उ० स्थावर जीवके पांच प्रकार है जैसे

(१) पृथ्वीकाय कच्ची मिट्टी नीमक आदि ।

(२) अपकाय–कच्चा पाणी आदि ।

(३) तेउकाय–दीपक बिजली आदि की अग्नि ।

(४) वाउकाय–हवा पवनके जीव ।

(५) वनस्पतिकाय–शाकभाजी हरेक पेड (लीला वृक्ष) कादि

उपरोक्त पांच प्रकारके स्थावर जीवोको एक स्पर्श इन्द्रिय अर्थात् शरीरहा होता है ।

त्रसजीव—के मुख्य चार प्रकार है।

(१) दोइन्द्रिय (२) ते इन्द्रिय

(३) चोरेन्द्रिय (४) पंचेन्द्रिय

३७ प्र० तिर्यंच जीवके कितने प्रकार है ?

उ० तिर्यंच जीवके तीन प्रकार है

(१) जलचर (२) स्थलचर और

(३) नभचर।

३८ प्र० इन जीवोको जानकर हमे कया करना चाहिये ?

उ० (शिक्षा) इन जिवोको जानकर हमें किसीको दुःख नहीं देना चाहिये। दुःख देनेसे दुःख भोगने पडते है और सुख देनेसे सुख मिलता है कोइजीव दुःखी हो तो उसका दुःख

दूर करनेका उद्यम करना चाहिये यह हमारा कर्तव्य है।

३९ प्र० दश प्रकारके प्राणोको जाननेका क्या प्रयोजन है ?

उ० हिंसा तथा अहिंसाको समझनेके लिये इनका जानना जरुरी है। जीव स्वभावसे नित्य अमर—शाश्वत है उसका मरण नहिं होता शरीरतो अनित्य (जड) ही है। इसीलिये प्राणोकी हिंसाको हिंसा कहते है। प्राणोकी रक्षाको अहिंसा या दया कहते है। हरेक प्राणीके पास जितने प्राण है वे उसके लिये बडे कामकी चीजे है। इसही के द्वारा

वे प्राणी इस स्थूल शरीरमें रहते हुए अपना २ काम करते है यदि हम उनको मार डालेंगे, तो हमने उनके पाणोको नाश कर उनके काममें विघ्न डाला यही अपराध किया। जितने अधिक व जितने मूल्यवान प्राणोका घात (नाश) किया जायगा या उनके बिगाढसे प्राणीको कष्ट दिया जायगा उतनाही अधिक अपराध होगा। जितने कम व कम मूल्यवान प्राणोका घात किया जायगा उनके या बिगाडसे प्राणीको कष्ट दिया जायगा उतनाही कम अपराध होगा सबसे कम अपराध स्थावरो के

घातका है, उससे बहुत अधिक द्वेन्द्रियोंके घातका, उससे बहुत अधिक तेइन्द्रियोंके घातका, उससे बहुत अधिक चौरिन्द्रियोके घातका उससे बहुत अधिक पंचेंद्रिय असंज्ञिके घातका, उससे बहुत अधिक पंचेंद्रिय संज्ञिके घातका उनमें पशुके घातसे मानवका घातका अधिक पाप. मानवो में भी साधुके घातका, परोपकारीके घातका साधारण मानवकी अपेक्षासे अधिक दोष है

४० प्र० पांच महाव्रत कोनसे है ?

उ० (१) सर्वथा हिंसाका त्याग (अहिंसा प्राणतिपात विरमण) (२) सर्वथा

जूठका त्याग (सत्य–मृषावाद विर-मण (३) सर्वथा चोरीका त्याग (अचौर्य–अदत्तादान विरमण) (४) सर्वथा मैथुनका त्याग–(ब्रह्मचर्य–मैथुन विरमण) (५) सर्वथा परिग्र-हका त्याग (अपरिग्रह–परिग्रह विरमण) इन पांच महाव्रतोंको मुनि महाराज पालते है।

४१ प्र० पांच समिति और तीन गुप्ति कौन सी है?

उ० समिति अर्थात् विवेकपूर्वक प्रवृत्ति (कार्य) और गुप्ति–असत् प्रवृत्तिको रोकना।

पांच समितिके नाम (१) इर्या

समिति (२) भाषा समिति (३) एषणा समिति (४) आदान भांड पात्र निक्षेपना समिति (५) परिष्ठापनिका समिति.

तीन गुप्ति के नाम (१) मनोगुप्ति (२) वचनगुप्ति और (३) कायगुप्ति.

इन पांच समितिओं और तीन गुप्तिओंको मुनि महाराज पालते है

४२ प्र० श्रावकके बारह व्रत कौनसे है !

उ० (१) स्थूल प्राणातिपात विरमण (अहिंसाणुव्रत) २ स्थूल मृषावाद विरमण (सत्याणुव्रत) (३) स्थूल अदत्तादानविरमण (अचौर्याणुव्रत) (४) स्थूल मैथुन विरमण (ब्रह्म-

चर्याणुव्रत) (५) परिग्रह परि-
माण-(परिग्रह परिमाण मर्यादा)
(६) दिग्व्रत (दिशामर्यादा)
(७) भोगोपभोग परिमाण (भोगोप-
भोगमर्यादा) (८) अनर्थदंडविरति
(अनर्थ दंडका त्याग) (९) सामायिक
(१०) देशावकाशिक (११) पौषध
(१२) अतिथिसंविभाग.

४३ प्र० बाइस अभक्ष्यके नाम कौनसे हैं !

उ० (१) वडके फल (२) पीपलके फल
(३) पिलखणके फल (४) कठंबरके
फल (५) गुलरके फल (६) मदिरा
(७) मांस (८) मधु (९) मक्खन
(१०) बरफ (११) निशा (१२)

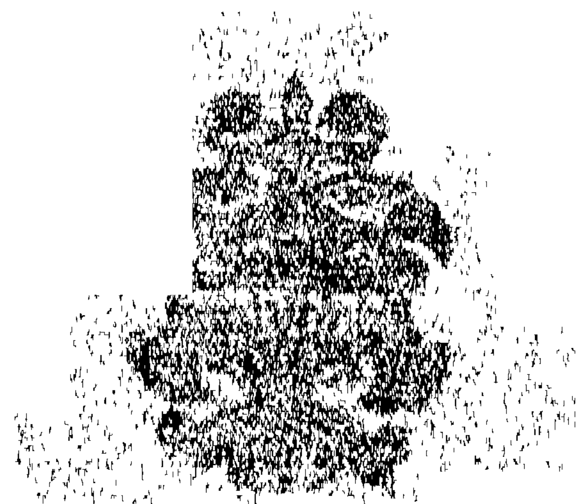
ओले (वरसादमें पडते है) १३
मट्टी (सचित्त) (१४) रात्रिभोजन
(१५) वहु बीजवाले फल (१६)
संधान (आचार बोल) (१७)
द्विदल (कच्चे दहिदूधके साथ कठोड
चिज मिलाकर खाना (१८) वगण
तुच्छफल (२०) अजानफल (२१)
चलितरस (२२) बत्रीस अनंतकाय.

संग्राहक—आत्माराम बोघडदास, पाटणवाला
धर्माध्यापक—श्री बी. जे. एस. आर.
जैन हाइस्कुल
बीकानेर, राजपुताना.

समाप्त.

बीकानेर श्री पार्श्वचंद्रसूरि

जैन पाठशाला



धार्मिकसूत्र और मुनिसूत्रविचार

..., અમદાવાદ